

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180774

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 81.6 / J24 G Accession No. G.H. 725

Author जगन्नाथदास 'रत्नाकर'

Title गंगावलि १९३५

This book should be returned on or before the date last marked below.

गं गा व त र ण

गंगावतरण

रचयिता

जगन्नाथदास 'रत्नाकर', बी० ए०

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९३५

Published by
K. Mittra
at The Indian Press, Ltd .
Allahabad.

Printed by
A. Bose
at The Indian Press, Ltd.,
Benares-Branch.

प्राक्कथन

वैक्रमी संवत् १-६७८ की मेष-संक्रांति चैत्र शुक्ल ५ बुधवार को पड़ी थी। उस दिन हरिद्वार में अधकुंभी के स्नान का पर्व था। उक्त पर्व पर श्रीमती राजराजेश्वरी श्री ६ महारानी जगदंबादेवी अबधेश्वरी भी वहाँ पधारी थीं; उनके साथ मैं भी, उनका प्राइवेट सेक्रेटरी होने के कारण, गया था। संक्रांति के पश्चात् भी उक्त श्रीमती वहाँ अपने शुभ भवन में, जो गंगा-तट पर है, कई महीने सुशोभित रहीं। जब वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की गंगा-सप्तमी के आने का तीन दिन रह गए तब श्रीमती ने मुझसे पूछा कि यह सप्तमी गंगाजी के नाम से क्यों विख्यात है और इसकी क्या कथा है। मैंने निवेदन किया कि मुझे तो इसका वृत्तांत ठीक-ठीक ज्ञात नहीं; पर संभव है कि इसकी कथा वाल्मीकि-रामायण में हो, क्योंकि उसमें महाराज भगीरथ के श्री गंगाजी के लाने का वर्णन मैंने देखा है। इस पर वह ग्रंथ मंगाया गया और गंगा-अवतरण की कथा श्रीमती को सुनाई गई। उसमें गंगा-सप्तमी का तो कुछ उल्लेख नहीं मिला, पर उसकी कथा अर्थात् गंगाजी के अवतरण का वर्णन श्रीमती को बड़ा रोचक प्रतीत हुआ। उन्होंने मुझसे कहा कि तुम भाषा में गंगावतरण-काव्य बना डालो तो बड़ा अच्छा हो। मैंने निवेदन किया कि आपकी आज्ञा तो शिरो-

धार्य है, पर मेरा कविता-अभ्यास बहुत दिनों से छूटा हुआ है, अतः यह आशंका होती है कि कदाचित् काव्य रोचक न बन सके। श्रीमती ने कहा, यह कोई बात नहीं, जिसको शक्ति है उसका अभ्यास फिर बढ़ सकता है; तुम गंगावतरण-काव्य अवश्य बनाओ। यदि वह वस्तुतः रोचक न हुआ तो प्रकाशित न कराना। मैं ने श्रीमती की आज्ञा का पालन करना विचार श्री शारदा देवी का स्मरण किया और यह सोचकर कि देखें श्री वाणी महारानी की इस समय मुझ पर कैसी कृपा है, मैं उन्हीं के संबंध में कवित्त बनाने लगा, तो ये तीन कवित्त हृदय से निकले—

सुमिरत सारदा हुलास हँसि हंस चढ़ी,

बिधि सैं कहति पुनि सोई धुनि ध्याऊँ मैं ।

ताल-तुक-हीन अंग-भंग छवि-छीन भई,

कविता बिचारी ताहि रुचि-रस प्याऊँ मैं ॥

नंददास-देव-घनआनंद-बिहारी-सम,

सुकवि बनावन की तुम्हैं सुधि द्याऊँ मैं ।

सुनि रतनाकर की रचना रसीली नैँकु,

ढीली-परी बीनहिँ सुरीली करि ल्याऊँ मैं ॥ १ ॥

आवति गिरा है रतनाकर निवाजन कैँ,

आनंद-तरंग अंग दहरति आवै है ।

हिय-तमहाई सुभ-सरद-जुन्हाई-सम,

गहब गुराई गात गहरति आवै है ॥

वर वरदाननि के विविध विधाननि के,

दान की उमग-धुजा फहरति आवै है ।

लहरति आवै दृग-कोरनि कृपा की कानि,

मंद-मुसक्यानि-छटा छहरति आवै है ॥ २ ॥

कहति गिरा यौं गुनि कमला उमा सौं चलौ,

भारत-मही मैँ पुनि मंजु छवि छाजैँ हम ।

राखैँ जौ न नैँकु टेक जन-मन-रंजन की,

हरि हर विधि की बृथा ही बाम बाजैँ हम ॥

माप मानि बैँछ्यौ ऐँठि लाड़िलौ हमारौ ताकौ,

करि मनुहार सुधा-धार उपराजैँ हम ।

साजैँ सुख संपति के सकल समाज आज,

चलि रतनाकर कौँ नैसुक निवाजैँ हम ॥ ३ ॥

**फिर मैँने श्री भगवती भागीरथी के अवतरण का ध्यान
किया तो यह कवित्त प्रतिभा मैँ प्रतिबिंबित हुआ—**

बोधि बुधि विधि के कमंडल उठावत हीँ,

धाक सुरधुनि की धँसी यौँ घट-घट मैँ ।

कहै रतनाकर सुरासुर ससंक सबै,

बिबस बिलोकत लिखे से चित्र-पट मैँ ॥

लोकपाल दौरन दसैँ दिसि हहरि लागे,

हरि लागे हेरन सुपात वर बट मैँ ।

त्रसन नदीस लागे खसन गिरीस लागे,

ईस लागे कसन फनीस कटि-तट मैँ ॥

इन कवित्तों से यह अनुमान कर कि यद्यपि मैंने तो श्री शारदा माता की सेवा विस्मृत कर रखी है तथापि उक्त अकारण-कृपाकारिणी भगवती ने मुझको सर्वथा भुला नहीं दिया है और स्मरण करने पर वे कृपा-प्रदान करने को तत्पर रहती हैं, जैसा कि बड़ों का धर्म है ।

“मैं मतिमंद बिसारब्यौ है तोहिँ पै तू न बिसारि बराबरी हांति है ।”

“निज-करनी-सकुचेहिँ कत सकुचावत इहिँ चाल ।

मोहूँ से नित-बिमुख-त्यों मनमुख रहि, गोपाल ॥”

यह सोचकर मैं गद्गद हो गया और उक्त गंगा-सप्तमी ही का, अर्थात् तारीख १४ मई सन् १८२१ ईसवी शनिवार का, मैंने गंगावतरण-काव्य की रचना आरंभ कर दी ।

पहिले मेरा विचार इस काव्य को लगभग सौ सवा सौ छंदों में समाप्त करने का था । अतः मैंने भगीरथ की तपस्या से कथा का आरंभ किया और जब तक हरिद्वार में रहा, कुछ बनाता रहा । हरिद्वार से श्रीमती मसूरी पधारी । वहाँ मैंने ज्येष्ठ शुक्ल गंगा-दशहरा (तारीख १५ जून सन् १८२१ ईसवी बुधवार) का गंगाजी के हरिद्वार तक पहुँचने का वर्णन समाप्त किया । पर उसमें जहू की कथा का बीच में लिखना छूट गया था । मेरा विचार तो इस काव्य को उतने ही पर समाप्त करने का था, अतः मैंने उक्त गंगा-दशहरे पर इसको श्रीमती के अर्पण किया और उन्होंने प्रसन्न

होकर मुझे एक हजार रुपए का पारितोषिक प्रदान कर अपनी गुणग्राहकता तथा उदारता का परिचय दिया । मैंने निवेदन किया कि मैं कविता का पारितोषिक लेना उचित नहीं समझता । इस पर श्रीमती ने कहा कि मैं तो यह रुपया तुमको दे चुकी, अब यदि तुम इसको अपने काम में लाना उचित नहीं समझते तो जिस काम में चाहो लगा दो । मैंने वह रुपया अंगीकृत कर काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा को अर्पित कर दिया और यह कह दिया कि इसके व्याज से प्रति तीसरे वर्ष ब्रजभाषा के सर्वोत्तम काव्य-ग्रंथ बनानेवाले को दो सौ रुपया पारितोषिक दिया जाय । यह उपयोग मैंने इस धारणा से निर्धारित किया कि उक्त धन ब्रजभाषा की कविता ही के उपलक्ष में प्राप्त हुआ था; अतः उसका ब्रजभाषा की कविता ही की उन्नति के निमित्त व्यय किया जाना उचित है ।

मेरा विचार तो, जैसा कि मैंने ऊपर निवेदन किया है, इस काव्य को उतना ही रखने का था पर मेरे कई प्रतिष्ठित मित्रों ने आग्रहपूर्वक मुझे सम्मति दी कि इसका सगर-कुमारों के तारने तक पहुँचाना चाहिए, जिसमें सांगोपांग कथा आ जाय । श्रीमती महारानी महोदया की भी ऐसी ही आज्ञा हुई । अतः मैंने वैसा ही करना निर्धारित किया । उस समय तो वह उतना ही बनकर रह गया । दूसरे वर्ष मैं कश्मीर चला गया और वहाँ बिहारी-सतसई की टीका करने में लगा रहा । तीसरे वर्ष फिर हरिद्वार जाना हुआ

और तब पुनः इस काव्य की पूर्ति करने पर ध्यान गया । अतः इसका अधिकांश वहीँ लिखा गया और फिर अयोध्या आने पर, संवत् १८८० की आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा भृगुवार को, इसकी समाप्ति की गई । पर कुछ आदिमें और कुछ अंत में बढ़ जाने के कारण इसके बीच-बीच में कुछ हेर-फेर की आवश्यकता रह गई थी, और जद्गु की कथा भी बीच में छूट गई थी । अतः इसको फिर से देख-भालकर शुद्ध प्रति के लिखने की आवश्यकता हुई । पर कार्यबाहुल्य, आलस्य तथा बिहारी-सतसई की टीका को समाप्त करने की व्यग्रता के कारण इतना समय न मिला कि यह कार्य शीघ्र हो जाता । पर शनैः-शनैः कुछ कार्य होता रहा । आज श्री सर्व-शक्तिमान् जगदीश्वर तथा श्री भगवती भारती की असीम कृपा से इसका पुनरवलोकन तथा परिशोधन समाप्त हुआ । अतः ब्रजभाषा काव्य के प्रेमी पाठकों की भेंट के निमित्त यह उपस्थित किया जाता है । यह स्मरण रहे कि न तो मुझे कोई बड़े कवि होने का गर्व है और न इस बात ही का अभिमान कि मैंने एक उत्तम काव्य बनाया है । पर श्री वृंदावन-विहारी, श्री जगत्पावनी भगवती भागीरथी तथा त्रिदेव-वंदिता भगवती भारती की अकारण कृपा से जो कुछ बन गया वह अर्पित है ।

“जदपि कवितगुन एकौ नाही ।”

गंग-प्रसाद “प्रगट इहि माही ॥”

ब्रजभाषा की लेख-प्रणाली के विषय में, जिसका मैंने इस काव्य में अनुसरण किया है, कतिपय बातों का यहाँ लिख देना आवश्यक है।

१—ब्रजभाषा में श तथा ण का प्रयोग नहीं होता। पर श्री को प्रायः प्राचीन कवियों ने श्री ही लिखा है और श्रवण, अश्रु इत्यादि शब्द भी किसी-किसी प्राचीन ग्रंथ में अपने इन्हीं रूपों में लिखे मिलते हैं। इस पुस्तक में श्री शब्द तो अपने ही रूप में लिखा गया है पर शेष शब्दों के श, स के रूप में लिखे गए हैं।

२—ज्ञ के स्थान में प्रायः ब्रजभाषा में ग्य लिखा जाता है। पर किसी-किसी पुराने लिखे हुए ग्रंथ में ज्ञ भी मिलता है। इस ग्रंथ में ज्ञ के स्थान पर ग्य नहीं किया गया है।

३—ऋ के स्थान पर ब्रजभाषा में प्रायः रि लिखा जाता था, जैसे—रिषि, रिन इत्यादि। पर अनेक प्राचीन ग्रंथों में ऋषि, ऋन इत्यादि पाठ भी मिलते हैं। इस ग्रंथ में ऋ के स्थान पर रि नहीं किया गया है।

इन बातों को मैं इसलिये लिखता हूँ जिसमें इस काव्य को पढ़कर किसी का इसकी लेख-प्रणाली के विषय में भ्रम न हो।

राजसदन, अयोध्या

पौष कृ० ७ गुरुवार

संवत् १८८१

जगन्नाथदास रत्नाकर

द्वितीय संस्करण का निवेदन

इस श्री गंगावतरण का प्रथम संस्करण सन् १९२७ ई० में इंडियन प्रेस द्वारा प्रकाशित हुआ था । उसमें प्रुफ-शोधन की असावधानी से अनेक अशुद्धियाँ रह गई थीं । अब ईश्वर की कृपा तथा अनुग्राहक ग्राहकों की गुण-ग्राहकता से इसके फिर से प्रकाशित होने का अवसर उपस्थित हुआ है । अतः इसके प्रथम संस्करण की अशुद्धियों का यथाशक्ति संशोधन करके यह पाठकों की भेंट किया जाता है ।

शिवालय घाट, काशी

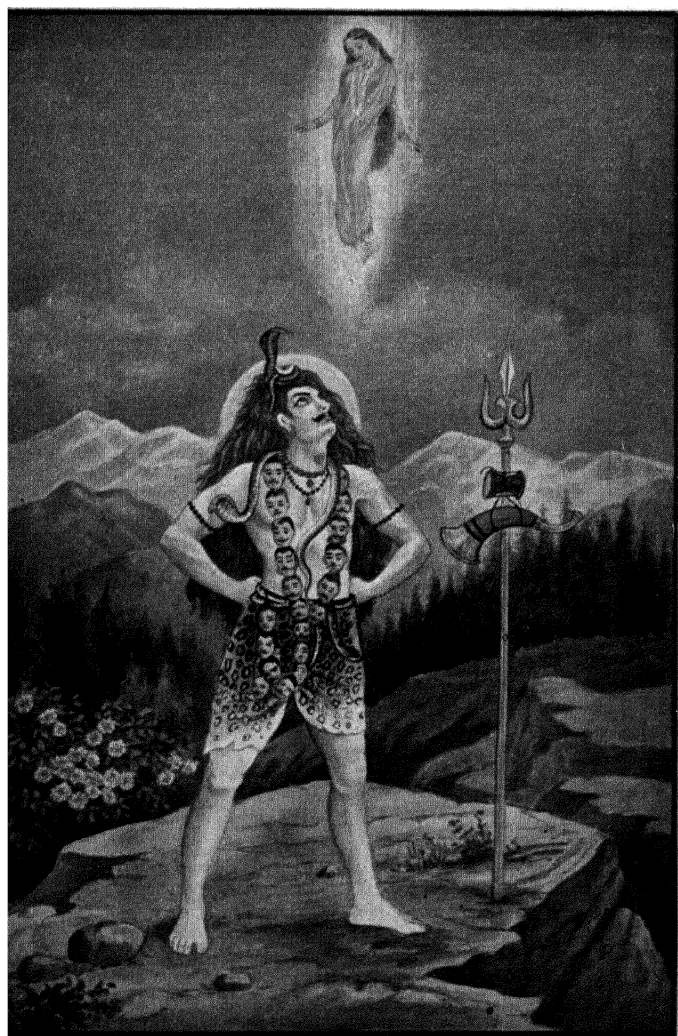
भाद्रपद कृष्ण ११

मंगलवार सं० १९८८



जगन्नाथदास रत्नाकर





गंगावतरण

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः

श्रीमद्राधारमणो विजयते

गंगावतरण

मंगलाचरण

जय विधि-संचित-सुकृत-सार-सुख-सागर-संगिनि ।
जय हरि-पद-अरविंद-मंजु-मकरंद-तरंगिनि ॥
जय सुर-सेवित-संभु-विपुल-बल-विक्रम-साका ।
जय भूपति-कुल-कलस-भगीरथ-पुन्य-पताका ॥
जय गंग सकल-कलि-मल-हरनि बिमल-बरनि बानी करौ ।
निज महि-अवतरन-चरित्र के भव्य भाव उर मैँ भरौ ॥ १ ॥

जय बृंदारक-बृंद-बंद्य बुध-गन-आनंदिनि ।
जय मुख-चंद-प्रकासि हृदय-तम-रासि-निकंदिनि ॥
जय सुमंद मुसक्याइ कृपा-चंदक-संचारिनि ।
जय कविंद-उर-अजिर सदा स्वच्छंद बिहारिनि ॥
तव बीना-पुस्तक-बाद बर रतनाकर उर मैँ बसैँ ।
सुभ सब्द-अर्थ-लालित्य दोउ गंग-औतरन मैँ लसैँ ॥ २ ॥

सिंधुर-बदन - सुरंग गंग - सिर - धरन - दुलारे ।
 गिरिजा-गोद विनोद करत मोदक मुख धारे ॥
 सुभ सुंडिका उभारि धारि सीतल जल धावत ।
 षड्मुख-सनमुख सुमुख साधि उभक्त भक्तकावत ॥
 सो लुकत ओट नंदीस की लखि दंपति-मन मुद भरै ।
 यह बाल-खेल गनपाल कौ बिघन-जाल सुमिरत हरै ॥ ३ ॥

प्रथम सर्ग

पावनि-सरजू-तीर अवध-पुरि बसति सुहावनि ।
 महि-महिमा-आधार त्रिपुर सोभा-सरसावनि ॥
 मेदिनि - मंडल - मंजु - मुद्रिका - मनि सी राजै ।
 बन-राजी चहुँ फेर घेर-नग की छबि छाजै ॥ १ ॥

बसुधा-सुभग-सिँगार-हार-लर सरजू सोहै ।
 मनि-नायक सु-ललाम धाम साकेत बिमोहै ॥
 भुक्ति-मुक्ति की खानि बेद-इतिहास-बखानी ।
 जाकौ बास महान पुन्य सौँ पावत प्राणी ॥ २ ॥

सप्त पुरिनि मैँ प्रथम रेख जाकी जग लेखत ।
 सुर-समाज है दंग रंग जाकौ जुरि देखत ॥
 ताकी जथा-स्वरूप कौन करि सकत बड़ाई ।
 जो त्रिलोक-अभिराम रामहूँ कैँ मन भाई ॥ ३ ॥

धवल धाम अभिराम लसत तहँ बिसद बनाए ।
हाट बाट के ठाट सुघर सुंदर मनभाए ॥
रुचिर रम्य आराम जिन्है^५ लखि नंदन लाजत ।
बापी कूप तड़ाग भरे जल बिमल बिराजत ॥ ४ ॥

दिनकर-बंस-अनूप-भूप-गन की रजधानी ।
न्याय चाय कै^५ भाय सदा सासित सुख-सानी ॥
चारहुँ बरन पुनीत बसत जहँ आनंद माने ।
धनी गुनी सुभ-कर्म धर्म-रत सुमति सयाने ॥ ५ ॥

भयौ भूप तिहि^५ नगर सगर इक परम प्रतापी ।
दिग-छोरनि लौं उमगि जासु कल कीरति व्यापी ॥
रिपु-बल-खल-दल-दलन प्रजा-परिजन-दुख-भंजन ।
गुनि-जन-जीवन-मूल सुकृति-सज्जन-मन-रंजन ॥ ६ ॥

गो-ब्राह्मन-प्रतिपाल ईस-गुरु-भक्त अदूषित ।
बल-बिक्रम-बुधि-रूप-धाम सुभ-गुन-गन-भूषित ॥
नीति-पाल जिहिँ सचिव बाल की खाल खिँचैया ।
सेनप स्वामि-प्रसेद-पात-थल रक्त-सिँचैया ॥ ७ ॥

भामिनि-भूषन भई^५ जुगल ताकी पटरानी ।
ज्ञान-सुसंगिनि जथा भक्ति स्रद्धा सुख-सानी ॥
जोबन-रूप-अनूप भूप-सुचि-रुचि-अनुगामिनि ।
जिनकी प्रभा निहारि हारि सकुचति सुर-स्वामिनि ॥ ८ ॥

इक केसिनी बिदर्भ-राज बर की कुल-कन्या ।
 दूजी सुमति सुपर्न-भव्य-भगिनी भुवि-धन्या ॥
 दोउ पुनीत पति-प्रीति-पात्र दोउ पति-अनुरागिनि ।
 दोउ कुल-कमला-गिरा-रूप दोउ अति बड़-भागिनि ॥ ८ ॥

भव-बैभव कौ जदपि भूप-गृह अमित उज्यारौ ।
 तउ इक सुत कुल-दीप बिना सब लगत अँध्यारौ ॥
 इक दिन मानि गलानि नोर नैननि नृप ढार्यौ ।
 काया-कष्ट उठाइ इष्ट-साधन निरधार्यौ ॥ १० ॥

हिम-गिरि कैँ प्रस्रवन-पार्श्व मुनि-जन-मन-हारी ।
 सुर - किन्नर - गंधर्व - सिद्ध - चारन - सुख-कारी ॥
 दोउ भामिनि लै संग भूप भृगु-आस्रम आए ।
 करि तप उग्र सहर्ष वर्ष सत सतत बिताए ॥ ११ ॥

हैं प्रसन्न ऋषिराज नृपति आदर अति कीन्यौ ।
 मन-मान्यौ बरदान दिव्य दोउ दारनि दीन्यौ ॥
 लहै केसिनी पूत एक कुल-संतति-कारी ।
 साठ सहस सुत सुमति बिपुल-बल-बिक्रम-धारी ॥ १२ ॥

लहि नरवर बर प्रवर पलटि निज नगर पधारे ।
 पुरजन-स्वजन-समूह भए सब सुहृद सुखारे ॥
 कछु दिन बीतैँ भईँ गर्भ-गरुड दुहुँ रानी ।
 भरि औरै द्युति देह नवल सोभा सरसानी ॥ १३ ॥

लहि सुभ समय-निदेस केसिनी सुत इक जायौ ।
गुरुवर गुनि गुन तासु नाम असमंज धरायौ ॥
सुमति सलोनी जनी एक तूँबी अति अद्भुत ।
निकसे जासैँ साठ सहस लघु बीज सरिस सुत ॥१४॥

दीरघ घृत-घट घालि पालि ते धाइ बढ़ाए ।
समय-संग सब-अंग रूप जोवन अधिकाए ॥
महा बीर बरिबंड भए महि-मंडल-मंडन ।
निज भुजदंड उदंड चंड-अरि-मुंड-बिहंडन ॥१५॥

उत असमंजहु भयौ भूरि-बल-विक्रम-साली ।
पै अति उद्धत कुल-बिरुद्ध निबुद्धि कुचाली ॥
कलित कल्पतरु माहिँ कटुक माहुर-फल आयौ ।
बिधि कलंक कौ पंक विमल-विधु-अंक लगायौ ॥१६॥

ताकी क्रीड़ा बिषम माहिँ पीड़ा जग पावत ।
पुर-बालक बहु पकरि सदा सो सरित डुबावत ॥
दीन प्रजा दुख पाइ आइ नृप-द्वार गुहारति ।
लहत भूप संताप चहत तिनकी अति आरति ॥१७॥

सुनि पुकार इक बार नीर नैननि नृप ढार्यौ ।
तुरत ताहि तजि नेह गेह सौँ दूरि निकार्यौ ॥
जैसैँ जब बहु करि उपाय औषधि हिय हारत ।
सब अंगनि दुख-देत दंत बुधिवंत उखारत ॥१८॥

ताकौ सुत सुभ अंसुमान कल-कीरति-धारी ।
 प्रिय-बादी प्रिय-रूप भूप-परिजन-हितकारी ॥
 भयौ जुबा है धीर बीर बरिबंड प्रतापी ।
 परम विनीत पुनीत नीति-मरजादा-थापी ॥१६॥

दियौ राज कौ काज ताहि जुवराज बनायौ ।
 अश्वमेध के करन माहिँ नृप निज मन लायौ ॥
 बोलि साधनी-पुंज मंजु मंडप रचवायौ ।
 जाकी सोभा निरखि बिस्वकर्मा सकुचायौ ॥२०॥

ऋत्विज-गन अति निपुन वेद-विद न्यौति पठाए ।
 गुरु बसिष्ठ लै ऋषि-समाज सादर तहँ आए ॥
 छोड़्यौ छिति-पति स्यामकरन सुबरन बर बाजी ।
 ताकैँ सँग डटि चली बिकट सुभटनि की राजी ॥२१॥

परम साहसी साठ सहस नृप-सुत असि-बाही ।
 दृढ़-दीरघ-बल-बलित-काय अतिसय उतसाही ॥
 गर्जत तर्जत चले संग सब अंग उमैठत ।
 जिनकौ लखि आतंक बंक-अरि-उर भय पैठत ॥२२॥

फिर्यौ अश्व चहुँ ओर छोर छिति की सब छानी ।
 पै मनसायौ नैँकु नाहिँ कोउ प्रतिभट मानी ॥
 रख्यौ बाँधिबौ दूरि घूरि कोउ ताहि न देखत ।
 प्रत्युत पूजि सभीति ईति बीती निज लेखत ॥२३॥

इमि बाजी प्रति नगर सगर-कीरति कल थापी ।
ताकी प्रभुता-छाप टाप-रेखनि छिति छापी ॥
करि करनी की अवधि अवध सब पलटि पधारे ।
देत दुंदुभी करत नाद अति आनंदवारे ॥२४॥

यह लखि मघवा बिलखि माखि मख-भंग बिचार्यौ ।
स्यामकरन-अपहरन-मंत्र हिय हठि निरधार्यौ ॥
पै रच्छक रन-दच्छ देखि अच्छय-बल-साली ।
भयौ प्रतच्छ न लच्छ अलच्छहिँ हर्यौ कुचाली ॥२५॥

पुनि गुनि सगर-प्रताप ताहि निज नगर न राख्यौ ।
कोउ अति दुर्गम दूर देस गोपन अभिलाख्यौ ॥
पर्व-दिवस लै अस्व चल्यौ चहुँघा चख फेरत ।
नर-अभुक्त उपयुक्त थान ताकैँ हिय हेरत ॥२६॥

महि-मंडल सब सोधि सपदि पाताल पधार्यौ ।
कपिल-धाम अभिराम तहाँ हिय हरषि निहार्यौ ॥
गयौ अस्व तहँ छोड़ि जहाँ मुनि करत तपस्या ।
बिरची राज-समाज-काज अति कठिन समस्या ॥२७॥

इत बिस्मित-चित चकित लगे चहुँ दिसि सब चाहन ।
बुधि-प्रमान अनुमान-सिंधु अवगाहन थाहन ॥
वायु-वेग रथ बाजि साजि कोउ दौर लगावत ।
कोउ बन-उपवन-हाट-बाट-बीथिनि मैँ धावत ॥२८॥

तिल-तिल सब मिलि सकल मेदिनी-मंडल सोभ्यौ ।
 अख-सख बहु साजि गाजि दस दिसि अवरोभ्यौ ॥
 भए थकित सब खोजि अख की खोज न पाई ।
 गए धर्म की धाक जथा नहिँ देति दिखाई ॥२६॥

तब भूपति-ढिग आनि व्यवस्था विषम बखानी ।
 बिस्मय-ब्रीड़ा-त्रास-हास-लटपट मृदु बानी ॥
 पर्यौ रंग मैँ भंग दंग ह्वै सकल बिचारत ।
 मूक भाव सौँ एक एक कौ बदन निहारत ॥३०॥

उपाध्याय-गन धाइ धवल आनन लटकाए ।
 त्रिकुटी उँचै ससंक बंक भ्रुकुटी भभराए ॥
 भरि गँभीर स्वर भाव भूप सौँ कियौ निवेदन ।
 गयौ पर्व-दिन अख भयौ भारी हित-छेदन ॥३१॥

सुनि अति अनहित बैन भए नृप-नैन रिसौँहैँ ।
 फरकि उठे भुजदंड तने तेवर तरजौँहैँ ॥
 कछ्यौ सारथी टेरी त्रिपथ-गामी रथ नाघौ ।
 महाचाप सायक अमोघ भाथनि भरि बाँधौ ॥३२॥

सेनप होहिँ सनद्ध सकल-जग-जीतनहारे ।
 हम चलि देखैँ आप कौन कौँ प्रान न प्यारे ॥
 काकौ सिर धर त्यागि धरा पर परन चहत है ।
 को जम-गाल कराल भाल निज भरन चहत है ॥३३॥

चाह्यौ उठन भुवाल भाषि इमि बलकति बानी ।
 पै राख्यौ कर पकरि रोकि गुरुवर बिज्ञानी ॥
 कह्यौ अहो नृप कौन ढार यह ढरन चहत है ।
 बृथा जज्ञ-फल-लोप कोप करि करन चहत है ॥३४॥

जज्ञ-सरन ज्यौँ त्यागि चरन बाहिर कढ़ि जैहै ।
 हैहै त्यों मख-भंग रंग रिपु कौ बढ़ि जैहै ॥
 पुनि याहू तौ करि बिबेक मन नैँकु बिचारौ ।
 कापै साजत सेन कौन जग सत्रु तिहारौ ॥३५॥

महि-मंडल मैँ भूप कौन ऐसौ भट मानी ।
 जो तव अच्छ-समच्छ सकत कर पकरि कृपानी ॥
 पै बिन जानैँ कहौ कौन पै अख चलैहै ।
 उथलपथल थल किएँ बृथा कछु लाभ न पैहै ॥३६॥

करि उपयुक्त उपाय प्रथम हय-खोज लगावौ ।
 जथाजोग उद्योग साधि ताकौँ पुनि पावौ ॥
 अपकीरति अपमान अमंगल न तु जग छैहै ।
 विमल भानु-कुल आनि राहु-छाया परि जैहै ॥३७॥

इमि सुनत बचन गुरुदेव के बिधि-बिबेक-आदर-भरे ।
 अति सोक सोच संकोच के खीच-बीच नरपति परे ॥३८॥



द्वितीय सर्ग

तब नृप गुरु-पद बंदि चंदसेखर उर ध्याए ।
जज्ञ पुरैबौ ठानि बिज्ञ दैवज्ञ बुलाए ॥
पूजि जथाबिधि असन बसन भूषन सौँ तोषे ।
दिए दच्छिना माहिँ लच्छ सुबरन पय-पोषे ॥ १ ॥

बहुरि जोरि जुग पानि सानि मृदु रस बर बानी ।
स्यामकरन की हरन-व्यवस्था बिषम बखानी ॥
कियौ प्रस्न पुनि गयौ कहाँ वह अस्व हमारौ ।
हारे हेरि समस्त व्यस्त महि-मंडल सारौ ॥ २ ॥

कढ़ी परति करबाल कोस सौँ चमकि-चमकि कै ।
निकसे आवत बान तून सौँ तमकि-तमकि कै ॥
उठि-उठि कर रहि जात कसकि तिनके बाहन कै ।
पै न लगति अरि-खोज ओज सौँ उतसाहन कै ॥ ३ ॥

जोग लगन दिन नखत सोधि सब लगे बिचारन ।
रेखा अंक खँचाइ दीठि पाटी पर पारन ॥
करि करि पृथक बिचार मेलि सब सार निसारथौ ।
गनपति गिरा मनाइ नाइ सिर बचन उचारथौ ॥ ४ ॥

बाजी गयौ पताल यहै ग्रह-चाल बतावति ।
हरनहार कौ धाम ठाम ऊँचौ ठहरावति ॥
है मिलिबौ स्रम-साध्य दैव पर अंत मिलैहै ।
हैहै सुभ परिनाम आदि अति असुभ लखैहै ॥ ५ ॥

सुनि गनकनि की गूढ़ गिरा सब बिस्मय पागे ।
असुभ-त्रास-सुभ-आस-भरे निरखन मुख लागे ॥
मख राखन कौ रंग पाइ नरपति हरियाने ।
मानौ सूखत सालि-खेत पर घन घहराने ॥ ६ ॥

और भाव सब भूलि भूप मन मैँ मुद मान्यौ ।
परमारथ कौ लाभ अस्व-पावन मैँ जान्यौ ॥
साठ सहस सुत धीर वीर बरिबंड बुलाए ।
कर्ष-हर्ष-आमर्ष-जनक बर बचन सुनाए ॥ ७ ॥

जाके पूत सपूत होहिँ तुम से बल-साली ।
ताकौ हय हरि लेहि हाय कोउ कूर कुचाली ॥
देव दनुज थहरात देखि दल तात तिहारौ ।
कहा बापुर्षौ चपल चोर आधे-जियवारौ ॥ ८ ॥

हैहै अति हित-हानि अस्व जो हाथ न ऐहै ।
हंस-बंस की साक धाक माटी मिलि जैहै ॥
है सनद्ध कटि-बद्ध सकल मन-सुद्ध सिधारौ ।
पैठि पेलि पाताल तुरत हय हेरि निकारौ ॥ ९ ॥

उथलपथल तल करहु सकल बसुधा धरि नाठौ ।
जल-मय थल करि देहु जलधि सब थल भरि भाठौ ॥
सुर किन्नर नर नाग अस्व-हर्ता जिहिँ पावौ ।
तुरत तुरंगम छीनि ताहि जम-लोक पठावौ ॥१०॥

रैहैँ आहुति देत भए दीच्छित हम तब लौँ ।
करिहौ पूरन जज्ञ पाइ बाजी नहिँ जब लौँ ॥
तातैँ तन मन लाइ बेगि बिक्रम बिस्तारौ ।
धरै ईस कर सीस करै कल्याण तिहारौ ॥११॥

पितु-आयसु सुनि सकल सुमति-नंदन मन माषे ।
तमकि तोलि भुजदंड चंड बिक्रम अभिलाषे ॥
चले नाइ पद माथ हाथ मोछनि पर फेरत ।
सिंहनाद बिकराल लाल लोचन करि हेरत ॥१२॥

जोजन जोजन बाँटि खादि खोजन महि लागे ।
सूल-कुदाल-गदाल-घात-रब सब जग जागे ॥
मनहु खाइ हिय घाइ मेदिनी मर्म-बिदारी—
टेरति उच्च बिषाद-नाद सौँ हरि दुख-हारी ॥१३॥

प्रबल प्रहारनि पौन चपल बाजी लौँ चमकत ।
हलचल होत समुद्र भद्र-अद्री-उर धमकत ॥
उड़त फुलिंग असेस सेस मानौ फुफुकारत ।
सुरपतिहूँ पछतात प्रलय-आगम निरधारत ॥१४॥

गैँडा सिंह गयंद रीछ आदिक बनचारी ।
 राकस-असुर-समाज उरग महि-उदर-बिहारी ॥
 बिदलित होत सगोत बिकल बिललात बिसूरत ।
 हाहाकार मचाइ दिसनि करुना सौँ पूरत ॥१५॥

तहस-नहस करि सहस साठ जोजन बसुधा-तल ।
 जंबुदीप चहुँ कोद खोदि सब कियौ रसातल ॥
 उलट-पलट ह्वै गई सकल मिति धिति जलथल की ।
 उड़ी अचलता-धाक धूरि ह्वै बिचलि अचल की ॥१६॥

देव दनुज गंधर्व नाग तब सब अकुलाए ।
 सर्व लोक के पूज्य पितामह पहुँ जुरि आए ॥
 माथ नाइ मन पाइ हाथ जुग जोरि सुबानी ।
 ह्वै उदास भरि साँस कही जग-त्रास-कहानी ॥१७॥

सगर-सुवन सुख-दुवन भुवन खोदे सब डारत ।
 जलचारी बहु सिद्ध संत मारे अरु मारत ॥
 कछु काहू की कानि आन उर मै नहिँ राखत ।
 परम प्रचंड उदंड बदन आवत सो भाषत ॥१८॥

‘इहै कियौ मख-भंग इहै हरि लियौ तुरंगम ।’
 यौँ कहि हिंसत सबहिँ लहहिँ जासौँ जहँ संगम ॥
 साठ सहस महिपाल-पूत महि-मर्म बिदारत ।
 त्राहि-त्राहि भगवंत भए प्राणी सब आरत ॥१९॥

लखि देवनि की भीति प्रीति-जुत कष्टौ बिधाता ।
 धरहु धीर महि-पीर बेगि हरिहै जगत्राता ॥
 सोइ प्रभु करुना-पुंज मंजु महिषी यह जाकी ।
 कपिल-रूप धरि धरत करत रच्छा नित याकी ॥२०॥

इहिँ बिधि करत कुचाल जबै पाताल सिधैहै ।
 कपिल-कोप-बिकराल-ज्वाल सौँ सब जरि जैहै ॥
 भूमि-भेद कौँ कियौ बेद आदिहिँ निर्धारन ।
 सगर-कुमारनि-काज आज जारन कौ कारन ॥२१॥

यह सुनि ढाढ़स पाइ ठाइ कछु देव ढिठाए ।
 कपिलदेव-गुन-गान करत निज-निज गृह आए ॥
 इत नृप-सगर-कुमार रसातल चहुँ दिसि धाए ।
 मिल्यौ पै न हय हारि पलटि पुनि पितु पहुँ आए ॥२२॥

सादर सब सिर नाइ सकल वृत्तांत सुनायौ ।
 पुनि पूछ्यौ अब होत कहा आयसु मन-भायौ ॥
 सुनत बिषम संवाद भूप टेढ़ी करि भौँहै ।
 मानि महा हित-हानि बचन बोले अनखौँहै ॥२३॥

महि नीचै हय-जोग ज्योतिसी-लोग बतावत ।
 तौ पुनि कारन कौन हेरि जो हाथ न आवत ॥
 फिरि धरि धीर गँभीर खेदि पाताल पधारौ ।
 हय हर्ता-जुत हेरि स्वकुल-कीरति बिस्तारौ ॥२४॥

पितु-प्रेरित पुनि चले बिपुल-बल-बिक्रमधारी ।
साठ सहस बरिवंड बीर सुर-नर-भय-कारी ॥
खोदि पताल उताल खोरि सब खोजन लागे ।
मच्यौ महा उत्पात नाग-असुरादिक भागे ॥२५॥

दिग-छोरनि की कोर लगे सब दौरि दबावन ।
सगर-प्रचंड-प्रताप-दाप-धौंसा धमकावन ॥
देखे दिग्गज तिन बिसाल बल बिक्रमवारे ।
सिर पर परम अपार भार धरनी कौ धारे ॥२६॥

करि प्रदच्छिना पूजि सबनि सादर सिर नायौ ।
कहि मख-भंग-प्रसंग सकल निज काज सुनायौ ॥
पै तिनहूँ सौँ मिली नैँकु नहिँ सोध तुरग की ।
तब उदास हूँ लही दसा मनि-हीन उरग की ॥२७॥

सब मिलि सोचन लगे कौन करतब अब कीजै ।
जासौँ पितु-हित साधि जगत अतुलित जस लीजै ॥
खोजे सकल पताल ब्याल-असुरादि बिदारे ।
बल बिक्रम स्रम सौर्य भए सब व्यर्थ हमारे ॥२८॥

कोउ आपुन बनि बिज्ञ अज्ञ दैवज्ञनि भाषत ।
कोउ सरोष सब दोष दैव माथे पर राखत ॥
कहत सबै बिन तुरग उरग-पुर सौँ जौ जैहै ।
पुरजन-परिजन-पितहिँ कौन मुख मलिन दिखैहै ॥२९॥

काहू बिधि जौ सोध कहूँ बाजी की पावैँ ।
 तौ कालहु कौ गाल फारि तुरतहिँ उगिलावैँ ॥
 पै बिन जानैँ हाय कौन पैँ हाथ दिखावैँ ।
 काकौ खोनित तृषित कृपानहिँ पान करावैँ ॥३०॥

इमि बिलखत बतरात चकित चितवत चख रीतैँ ।
 भए मंद-मुख-चंद गर्व-सर्वरि के बीतैँ ॥
 पूरब-दक्खिन-छोर-ओर गवने उत्तर तैँ ।
 चले अग्नि मैँ मनहु प्रेरि भावी-कर बर तैँ ॥३१॥

भई छीँक पग-संग अंग बाएँ सब फरकै ।
 सरकै सकल उछाह अकथ भय भरि उर धरकै ॥
 पै निरास-हठ ठानि बढे यह मानि अभागे ।
 अब धौँ अलहन कौन अस्व-अ-लहन के आगे ॥३२॥

मित्यौ जात मग माहिँ ठाम इक परम मनोहर ।
 निज सोभा मनु स्वर्ग गाड़ि तहँ धरी धरोहर ॥
 मनि-मय पर्वत-पुंज मंजु कंचन-मय धरनी ।
 तेज-रासि दिग-छोर उए मानौ सत तरनी ॥३३॥

देखे तिन तप करत तहाँ मुनिबर-बपुधारी ।
 स्वयं कपिल भगवान भूमि-भय-निखिल-निवारी ॥
 ध्यानावस्थित सांतिरूप पदमासन मारे ।
 रोम रोम सौँ प्रभा-पुंज चहुँ पास पसारे ॥३४॥

इक दिसि देख्यौ चरत चारु निज मख कौ बाजी ।
उठी उमगि सब-अंग हर्ष-पुलकनि की राजी ॥
दबी दीनता गई ग्लानि खिसियानि सिरानी ।
भावी-बस उर बहुरि अमित अहमति अधिकानी ॥३५॥

निहचय जानि अजान कपिलदेवहिँ हय-हर्ता ।
जज्ञ-बिघन कौ मूल सकल निज स्रम कौ कर्ता ॥
धरि धरि सूल कुदाल सैल बिटपनि की साषा ।
धाए बुद्धि-बिरुद्ध क्रुद्ध जलपत दुर्भाषा ॥३६॥

रे दुरमति दुर्भाग्य दुष्ट दुर्बृत्त दुरासय ।
कायर कूर कुपूत कपट-रत कुटिल-कला-मय ॥
हय चुराइ पाताल पैठि बैठ्यौ बक-ध्यानी ।
सगर-सुतनि की पै महान महिमा नहिँ जानी ॥३७॥

कालाहल सुनि चौंकि चपल पल कपिल उघारे ।
निरखे सगर-किसोर घोर-बल-बिक्रमवारे ॥
करि कराल दृग लाल तमकि तिनकैँ तन ताक्यौ ।
कियौ हुमकि हुंकार छोभि त्रिभुवन भय छाक्यौ ॥३८॥

सब अंगनि इक-संग दीठि दामिनि लौँ दमकी ।
बज्र-घात लौँ अति कराल “हुं” की धुनि धमकी ॥
देखत-देखत भए सकल जरि छार छनक मैँ ।
दारु-पुत्तलनि माहिँ लगी मनु आगि तनक मैँ ॥३९॥

इमि सगर-नृपति-नंदन सकल कपिल-कोप परि जरि गए ।
मनु साठ सहस नरमेध मख गंग-अवतरन-हित भए ॥४०॥



तृतीय सर्ग

इत नित आहुति देत रहे नृप जज्ञ जगाए ।
अस्व अस्व-हर्तार अस्व-खाजिनि लव लाए ॥
भए बिबिध अपसगुन परच्यौ उर भभरि अचानक ।
मख-मंडप मुद-मूल लग्यौ दृग लगन भयानक ॥ १ ॥

बहु दिन बीते जानि आनि कछु हृदय सकाए ।
अंसुमान सौँ कहे भूप बर बचन सुहाए ॥
तव पितरनि कौँ गए तात बहु दिवस सिराए ।
हय-हेरन के फेर माहिँ सब आप हिराए ॥ २ ॥

देव दनुज नर नाहिँ तिन्हैँ कोउ बाधनहारौ ।
पै संकित चित होत दैव-करतब गुनि न्यारौ ॥
तिनकौ समुझि सुभाव सुद्ध उद्धत अभिमानी ।
लखि असगुन उर उठति असुभ-संका अनजानी ॥ ३ ॥

तुम निज पुरषनि सरिस बिज्ञ बल-बिक्रम-धारी ।
हंस-बंस के सब-प्रसंस्य-गुन-गन-अधिकारी ॥
खोजि अस्व तिन सहित परम हित करौ हमारौ ।
चारिहु जुग मैँ रहै सुजस सुभ अमर तिहारौ ॥ ४ ॥

धारौ कठिन कृपान पानि धनु बान सँभारौ ।
 महि-नीचैँ बहु बसत जीव हिंसक ध्रुव धारौ ॥
 प्रतिबाधक बधि बाँधि बंध-वृंदनि अभिनंदौ ।
 लहौ सिद्धि सानंद सकल-दुख-दंद निकंदौ ॥ ५ ॥

धरि आयसु सुभ सीस ईस-चरननि चित दीने ।
 अस्त्र सस्त्र पाथेय सूर सेनप सँग लीने ॥
 अंसुमान सुख मानि चल्थौ हेरन बर बाजी ।
 गुरु बसिष्ठ-पद पूजि बंदि बिप्रनि की राजी ॥ ६ ॥

गिरि-खोहनि खाड़िनि गँभीर सो स्रम करि सोध्यौ ।
 कूप-सरित-सर-ताल-खाल-पालनि मन बोध्यौ ॥
 पै न अस्व की टोह कहूँ काहूँ सौँ पाई ।
 न तु पताल-पुर-पंथ दियौ कहूँ दृगनि दिखाई ॥ ७ ॥

इक दिन देख्यौ जात भूमि-नीचे कौ मारग ।
 सगर-सुतनि कौ खन्यौ अतल-बितलादिक-पारग ॥
 तिहिँ लखि ललकि कुमार लग्यौ दृग-डोरनि थाहन ।
 कछु बिस्मय कछु हर्ष कछुक चिंता सौँ चाहन ॥ ८ ॥

भानु-बंस कौ बहुरि बीर बर बिरद बिचार्यौ ।
 कर कृपान उर ईस-आस तिहिँ मग पग धार्यौ ॥
 जाइ रसातल धाइ दिव्य दिग्गज सब देखे ।
 देव-दनुज-सेवित निहारि अति सुभ करि लेखे ॥ ९ ॥

करि करि सबहिँ प्रनाम नाम कहि काम जनायौ ।
 पै तिनहूँ सौँ नैकु अस्व-संवाद न पायौ ॥
 लहि असीस चलि चपल सकल पुनि पाय बढ़ाए ।
 सहत दुसह-दुख-दाह कपिल-आश्रम मैँ आए ॥१०॥

सुगति गरुड़ तहँ मिल्यौ सुमति-भ्राता सुभ-दानी ।
 मानहु मंगल सकुन-राज कीन्ही अगवानी ॥
 जानि पितामह-सरिस कुँवर सादर सिर नायौ ।
 निज आगम कौ सकल बिषम संवाद सुनायौ ॥११॥

बहुरि कह्यौ कर जोरि बिनय-रस बेरि बचन मैँ ।
 तात तुम्हैँ सब ज्ञात तिहारी गति त्रिभुवन मैँ ॥
 पितरनि कौ वृत्तांत कछुक करुना करि भाषौ ।
 पुनि कहि कहाँ तुरंग रंग रवि-कुल कौ राखौ ॥१२॥

अंसुमान के बैन बैनतेयहिँ अति भाए ।
 सगर-सुतनि कौ सुमिरि सोचि लोचन भरि आए ॥
 करी भाँति बहु पच्छि-राज जुबराज-बड़ाई ।
 बरनि बीरता बिनय बचन-रचना-चतुराई ॥१३॥

भाष्यौ बहुरि बताइ छार-रासिनि कौ लेखौ ।
 निज पितरनि की पूत दसा दारुन यह देखौ ॥
 भए छनक मैँ छार सकल निज पाप प्रबल सौँ ।
 अप्रमेय-तप-तेज कपिल के कोप-अनल सौँ ॥१४॥

यौं कहि जथा-प्रसंग कथा संछेप बखानी ।
 कहत सुनत दुहुँ दृगनि सोक-सरिता उमगानी ॥
 अंसुमान सुनि समाचार सब अति दुख पाग्यौ ।
 लखि लखि छार पछार खाइ बिलपन लुठि लाग्यौ ॥१५॥

हाय तात यह भयौ घात बिन बात तिहारौ ।
 होम करत कर जरद्यौ परद्यौ बिधि बाम हमारौ ॥
 आए बाजी लेन बेचि बाजी इमि सोवत ।
 उठत क्यौं न पितु लखत बाट उत इत सिसु रोवत ॥१६॥

सके न देखि उदास कबहुँ तुम बदन हमारौ ।
 बिलकत आज बिलोकि क्यौं न कर गहि बुलकारौ ॥
 खेलन खोरि न दियौ हमैँ तुम धूर-धुरेटे ।
 सो अब आपुहिँ आइ छार-रासिनि मैँ लेटे ॥१७॥

पठ्यौ हमैँ भुवाल तात सुधि लेन तिहारी ।
 कहैँ कहा संबाद जाइ हम मर्म-बिदारी ॥
 सुनतहिँ ताकी कौन दसा दारुन है जैहै ।
 सुमति केसिनी की बिषाद-मरजाद नसैहै ॥१८॥

सुनि यह बिषम बिलाप ताप खग-पति अति पायौ ।
 कहि अनेक इतिहास ताहि बहु बिधि समुझायौ ॥
 धीर बीर इक्ष्वाकु-वंस कौ बिरद उचार्यौ ।
 छत्रिनि कौ सुभ परम धरम धीरज निरधार्यौ ॥१९॥

गुरु बसिष्ठ कौ सिष्य भाषि दै मरक मषायौ ।
भावी-भोग न टरन जोग सब भाँति लखायौ ॥
पुनि इक दिसि चलि कपिलदेव कौ दरस करायौ ।
तिनकैँ पास पुनीत जज्ञ-हय चरत दिखायौ ॥२०॥

अंसुमान बिस्वाम लह्यौ कछु मुनि-दरसन तैँ ।
कछुक तोष हय हेरि हियैँ आसा सरसन तैँ ॥
माथ नाइ सकुचाइ मनहिँ मन बंदन कीन्यौ ।
धन्यवाद इहिँ लाभ-काज खग-राजहिँ दीन्यौ ॥२१॥

लग्यौ बहुरि सो लखन काऊ सुचि-रुचिर-जलासय ।
जासौँ लहि जल-क्रिया जाहिँ सब पितर सुरालय ॥
करि लच्छित यह लच्छ पच्छि-पति चायनि चाह्यौ ।
स्रद्धा सील बिबेक बरनि कहि साधु सराह्यौ ॥२२॥

पुनि नैननि भरि नीर पीरजुत बचन उचार्यौ ।
अप्रमेय-तप-कपिल-साप तव पितरनि जार्यौ ॥
लहि यह लौकिक आप ताप तिनकौ नहिँ जैहै ।
सात समुंदर सीँचि न बाड़व-ज्वाल जुड़ैहै ॥२३॥

तिनके तारन कौ उपाय दुस्साध्य महा है ।
पै तिहिँ स्रम-हित हंस-बंस बर बाध्य महा है ॥
केवल गंग-तरंग पाप यह टारि सकति है ।
कपिल-साप सौँ ब्रह्मद्रव उद्धारि सकति है ॥२४॥

धर्म-धीर जो बीर इन्हैँ तारन मन ठानै ।
 सो स्रम साधि अभंग गंग इहिँ आस्रम आनै ॥
 परत छार सो धार तुरत सिंगरे तरि जैहैँ ।
 कपिल-साप को दाप पाप के ताप नसैहैँ ॥२५॥

कोऊ अपर उपाय तिन्हैँ तारन कौ नाहीँ ।
 हम करि गूढ़ बिचार चारु देख्यौ मन माहीँ ॥
 तातैँ अब लै तुरग . तात तुम सपदि सिधावौ ।
 जोहत बाट भुआल काल जनि बृथा बितावौ ॥२६॥

अंसुमान करि कान बिस्तु-बाहन की बानी ।
 है बिस्मित-चित नमित-सीस बहु बिनय बखानी ॥
 कद्यौ सपुलकित गात बात सुनि तात तिहारी ।
 गुप्त-गंग-गुन-गान-सुनन-स्रद्धा उर धारी ॥२७॥

तातैँ करि अब कृपा कहौ प्रनतारति-बारन ।
 अपर नदिनि सौँ अधिक गंग-महिमा कौ कारन ॥
 जो कपिलहु कौ कठिन साप करि दूरि सकति है ।
 परम-पाप-पर्वतहु चटकि चकचूरि सकति है ॥२८॥

अंसुमान की मंजु बचन-रचना-चतुराई ।
 सुनि खगपति-मति-सीँव फड़कि गुनि श्रीव हलाई ॥
 सुमिरि गंग-गुन-रूप भए सुख-मगन एक छन ।
 पुनि सँभारि उर धारि धीर बोले प्रमुदितमन ॥२९॥

अहो तात हम कहा गंग की बात चलावैँ ।
 सहस सारदा सेस जाहि कहि पार न पावैँ ॥
 पूरन ब्रह्म-स्वरूप बिगत-बकवाद वही है ।
 निगुन - सगुन - बिबाद - बीच मर्जाद वही है ॥३०॥

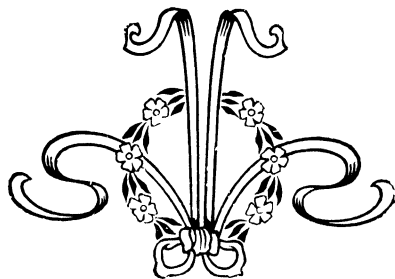
कोटिनि बिधि-हरि-हरहिँ बिबिध जो नाच नचावत ।
 निज इच्छा-अनुसार सृजत पोषत बिनसावत ॥
 वह ताही कौ द्रवीभूत सुभ रूप बिमल है ।
 ताहीतैँ ताके प्रभाव कौ भाव प्रबल है ॥३१॥

ताकी महिमा अति महान को जानि सकत है ।
 पारावार अपार कौन करि पार सकत है ॥
 सेवत ताहि बिरंचि संचि सादर मन लाए ।
 हरि हर ताके भूरि भाग पर रहत सिहाए ॥३२॥

ब्रह्मा-पुत्र बसिष्ठदेव कुल-इष्ट तिहारे ।
 जानत गंग - प्रभाव - भाव त्रिभुवन तैँ न्यारे ॥
 निज-नाथहिँ सुनि कहत कथा उत्तपति की ताकी ।
 हमहूँ कछु मति सरिस बात बूझी महिमा की ॥३३॥

माया ब्रह्म स्वरूप जुगल तामैँ इक थल हैँ ।
 भुक्ति-मुक्ति-फल दिव्य दोऊ ताकैँ करतल हैँ ॥
 कोउ न असंभव काज ताहि बिनहूँ कछु कारन ।
 एकै बात बिहाइ पाइ पापी नहिँ तारन ॥३४॥

इमि गुनत गंग-गुन-गन गहकि गरुड़-गिरा गद्गद भई ।
मनु प्रबल प्रबाह अथाह की तरल तरंगनि परि गई ॥३५॥



चतुर्थ सर्ग

अंसुमान सुनि गुप्त गंग-महिमा मन-मानी ।
हाथ जोरि पुनि पच्छि-नाथ सौँ बिनय बखानी ॥
सुनि यह रुचिर रहस्य-बात तव तात अनोखी ।
अजगुत भयौ महान जाति चित-वृत्ति न तोखी ॥ १ ॥

स्रद्धा बढ़ी अपार अपर वृत्तांत सुनन की ।
तव आनन सौँ चुवत चारु सुभ सुमन चुनन की ॥
तातै ५ पूछन चहत कछुक उर ठाई ढिठाई ।
बालक जानि अजान धरौ जनि रोष-रुखाई ॥ २ ॥

कोटिनि विधि हरि संभु आदि सुर-गन तुम भाषे ।
सबकौ नेता कछौ एक जाके सब राखे ॥
ताकौ कछु सुभ नाम धाम अरु काम बखानौ ।
जातै ५ यह भ्रम-भैर-परचौ मन लहै ठिकानौ ॥ ३ ॥

बहुरि कहौ सो अति अनूप जल-रूप भयौ क्यौँ ।
बिधिही ५ कै ५ गृह पूज्य सकल सुर-भूप भयौ क्यौँ ॥
महा-मोह-तम-तोम भरचौ उर-ब्योम प्रकासौ ।
ज्ञान-भानु स-मलान करत संसय-अहि नासौ ॥ ४ ॥

सुनत कुँवर की बिनय दीन छल-हीन सुहाई ।
 गुनत गंग-कल-कथा-सुनन की आतुरताई ॥
 हरिजानहु-हिय हुलसि कहन-स्रद्धा सरसानी !
 इमि मुख-मग है अति उदार बानी उमगानी ॥ ५ ॥

यह इतिहास पुनीत महा-मुद-मंगल-कारी ।
 जद्यपि परम रहस्य देव-मुनिहूँ-मन-हारी ॥
 तउ अधिकारी जानि तुम्है हम कछुक सुनावत ।
 कहत सुन्यौ निज प्रभुहि तत्त्व ताकौ गहि गावत ॥ ६ ॥

अखिल - कोटि - ब्रह्मांड - परम - प्रभुता - ध्रुव-धारी ।
 कृष्णचंद आनंद-कंद स्वच्छंद-बिहारी ॥
 नित नव लीला ललित ठानि गोलोक-अजिर मै ।
 रमत राधिका-संग रास-रस-रंग रुचिर मै ॥ ७ ॥

इक दिन लहि कातिक-पुनीत-पूनौ मन-भाई ।
 श्रीराधा-उत्सव महान अति आनंद-दाई ॥
 बिधि हरि हर लै मुख्य देव गोलोक सिधाए ।
 जुगल-दरस की सरस लालसा लोचन लाए ॥ ८ ॥

देखि तहाँ की परम रम्य सुखमा सुधराई ।
 तजी चकित-चित-चखहुँ सुभाविक चंचलताई ॥
 लहि अमंद आनंद एकटक देखि रहन कौ ।
 लूट्यौ सुर-गन लाहु नैन अनिमेष लहन कौ ॥ ९ ॥

बन उपवन आराम ग्राम पुर नगर सुहाए ।
लसत ललित अभिराम चहूँ दिसि अति छबि छाए ॥
बत्तिस-बन-संयुक्त बीच बृंदावन राजत ।
गोबद्धन गिरिराज मंजु मनि-मय छबि छाजत ॥१०॥

दिव्य द्रुमनि की पाँति लसति सब भाँति सुहाई ।
ललित लता बहु लहलहाति जिनसैं लपटाई ॥
स्यामबरनि मन-हरनि नदी कृष्णा अति निर्मल ।
कलित-कंज-बहु-रंग बहति तहँ मंजु मधुर-जल ॥११॥

सीतल सुखद समीर धीर परिमल बगरावत ।
कूजत बिबिध बिहंग मधुप गूँजत मनभावत ॥
वह सुगंध वह रंग हंग की लखि टटकाई ।
लगति चित्र सी नंदनादि बन की चटकाई ॥१२॥

जहँ-तहँ गोपी बृंद-बृंद सानंद कलोलति ।
जुगल-प्रेम-मद-छाक-छकी डगमग मग डोलति ॥
थिर-बर-बैस अनूप-रूप गुन-गर्ब-गसीली ।
बिबिध-बिलास-हुलास-रास-रँग-रत्त रसीली ॥१३॥

जित-तित सुरभि सबत्स चरति बिचरति सुखसानी ।
बिबिध-बरनि मनहरनि तरुनि सुभ-गुन-सरसानी ॥
हेम-कलित सुठि सृंग पुच्छ-मंडित-मुकताली ।
पग नूपुर-भनकार भूल की भलक निराली ॥१४॥

मध्य कच्छ मैँ अरुन अच्छ अच्छयबट राजत ।
 मनहु लोक-पति-सीस छत्र मानिक-मय छाजत ॥
 कोटि-चंद-द्युति-दिव्य लसत तहँ चारु चँदोवा ।
 सज्जित विविध विधान लाइ सब साज सँजोवा ॥१५॥

ताके नीचैँ सुधर सहस-दल कमल सुहायौ ।
 अति विचित्र जिहिँ चित्र न सब्दनि जात खँचायौ ॥
 सुभ षोडस-दल कमल अमल राजत तिहिँ ऊपर ।
 अष्ट दलनि कौ बहुरि बनज सोभित ताहू पर ॥१६॥

तीन्यौ क्रम सौँ अधिक अधिक सोभा-सरसाए ।
 पद्मराग बहु-रंग लाइ रचि रुचिर बनाए ॥
 कंचन-मय किंजलक-दलक-द्युति भलमल भलकति ।
 मर्कत-मनि-कृत-कलित-कर्निका-छवि छुटि छलकति ॥१७॥

कंजहि सी सुख-पुंज परम अति अजगुतहाई ।
 सुबरन माहिँ सुगंध मनिनि मैँ कोमलताई ॥
 तिहिँ थल की सुखमा अनूप कासौँ कहि आवै ।
 जो माया निज-प्रभु बिलास-हित हुलसि बनावै ॥१८॥

मध्य कंज पर मंजु रतन-सिंहासन सोहै ।
 जाकी सुखमा कहत सहस-मनि-धर-मन मोहै ॥
 ताल-मेल सौँ मेलि रतन बहुरंग लगाए ।
 जिनकी द्युति सौँ कोटि नवग्रह रहत चकाए ॥१९॥

तापर लखे बिराजमान बर जुगल-बिहारी ।
गौर - स्याम - दोउ - तेज - तत्त्व-मृदु-मूरति-धारी ॥
घनीभूत सुभ सुद्ध सच्चिदानंद अखंडित ।
ब्रह्म अनादि सु आदि-सक्ति-जुत गुन-गन-मंडित ॥२०॥

इक इक बाहिँ उमाहि किए गलबाहिँ बिराजैँ ।
इक इक कर बड़भाग बनज बंसी कल भ्राजैँ ॥
मनु तमाल पर सोनजुही की लसै माल बर ।
स्याम-तामरस-दाम प्रफुल्लित सोनजुही पर ॥२१॥

नील पीत अभिराम बसन द्युति-धाम धराए ।
मनहु एक कौ रंग एक निज अंग अँगाए ॥
निज-निज-रुचि-अनुहार धरे दोउ दिव्य बिभूषन ।
जो तन-द्युति की दमक पाइ चमकत ज्यौँ पूषन ॥२२॥

उर बिलसत सुभ पारिजात के हार मनोहर ।
सब लोकनि की फूल - गंध के मूल सुघर बर ॥
चारु चंद्रिका मंजु मुकुट छहरत छबि-छाए ।
मनहु रतन तन-तेज पाइ सिर चढ़ि इतराए ॥२३॥

बिपुल पुलक दुहुँ गात परसपर सरस परस के ।
पीत नील मनि माहिँ मनौ अंकुर सुचि रस के ॥
सुधि करि बिबिध बिलास फुरति अँग-अँग फुरहरी ।
मनु सुखमा कैँ सिंधु उठति आनंद की लहरी ॥२४॥

दोउ दोउनि कौँ निरखि हरषि आनँद-रस चाखत ।
 दोउ दोउनि की सुरुचि मूक भावनि सौँ राखत ॥
 दोउ दोउनि की प्रभा पाइ इकरँग हरियाने ।
 इक-मन इक-रुचि एक-प्राण इक-रस सरसाने ॥२५॥

मुखनि मंद मुसकानि कृपा-उमगानि बतावति ।
 चखनि चपलता चारु ढरनि-आतुरी जतावति ॥
 जो ब्रह्मांड निकाय माहिँ सुखमा सुघराई ।
 द्वै दल ताके परम बीज के सुभ सुखदाई ॥२६॥

लखि वह सुखद समाज-साज वह निखिल निकाई ।
 वह माधुरी स-लौन तथा वह मधुर लुनाई ॥
 भए देव-गन मगन दृगनि आनँद-जल छाथौ ।
 बलिहारी कहि रहे मौन गह्वरि गर आयौ ॥२७॥

यह देवनि की देखि दसा प्रभु जन-हितकारी ।
 कृपा-दृष्टि सौँ हेरि हरषि हिय-हिलग निवारी ॥
 बहुरि पूछि कुसलात मंजु मृदु बचन उचार्यौ ।
 आसन उचित दिवाइ सबनि सादर बैठार्यौ ॥२८॥

लगी सारदा प्रेम-पुलकि कल कीरति गावन ।
 बीना मधुर बजाइ भूमि नृपुर भनकावन ॥
 लय-लीकनि सौँ चारु चित्र बहु-भाय खँचाए ।
 रुचिर राग-रँग •पूरि हृदय-दृग लोल लुभाए ॥२९॥

भई सभा सब दंग रंग ऐसौ कछु माच्यौ ।
प्रेमानंद अमंद मनहु तहँ तन धरि नाच्यौ ॥
सुनि वह गान-बिधान लगे सुर सकल सराहन ।
ब्रह्मदेव हिय हुलसि बंक संकर-दिसि चाहन ॥३०॥

सिव सुजान तब उमगि डमकि डमरू सुख-पागे ।
रचि तांडव रस-धूमि जुगल-गुन गावन लागे ॥
भर्यौ भूरि आनंद हृदय तिहिँ लगे उलीचन ।
पौन-पटल पर भव्य भाव अंतर के खीचन ॥३१॥

सकल कला के परम-धाम संकर अबिकारी ।
प्रभु-गुन-गान सुजान सभा अवसर मनहारी ॥
सब संघट मिलि मंजु बँध्यौ इमि समौ सुहायौ ।
भए देव-गन मुग्ध देह-अभ्यास सिरायौ ॥३२॥

इमि बाढ़्यौ आनंद-सिंधु सुधि-बुधि-लय-कारी ।
आपुहुँ हूँ सिव मगन गान की सुरति बिसारी ॥
तब सब संज्ञा पाइ दीठि जो इत-उत फेरी ।
बिस्मय लख्यौ महान जुगल-मूरति नहिँ हेरी ॥३३॥

सिंहासन चहुँ पास अमल जल-रासि लखाई ।
गौर स्याम द्युति-दाम ललित लहरनि छबि छाई ॥
हूँ अति बिह्वल बिकल लगे सुर सकल बिसूरन ।
आरत-नाद बिषाद-बाद सौँ सब दिसि पुरन ॥३४॥

चतुरानन धरि ध्यान जानि तब मरम प्रकास्यौ ।
 सबनि धरायौ धीर पीर-संसय-तम नास्यौ ॥
 संभु-गान-सुख-सुधा-सिंधु सुभ की लहि लहरै ।
 दोउ लावन्य-स्वरूप द्रवित है यह छिति छहरै ॥३५॥

यह सुनि सब सुख पाइ उमगि अस्तुति-अनुरागे ।
 पुनि-दरसन-हित करन बिनय अति आतुर लागे ॥
 प्रभु-मनसा लहि संभु जगत-हित पर चित दीन्यौ ।
 मुक्ति-दीप भरि नेह प्रकासन कौ प्रन कीन्यौ ॥३६॥

तब श्रीसक्ति-समेत भक्ति-बस-बिस्व-बिहारी ।
 बिरही-दुख-कातर कृपाल प्रनतारति-हारी ॥
 घनीभूत है फेरि दरस दै हृदय सिराए ।
 कृपा अनुग्रह मनहु जुगल बिग्रह धरि आए ॥३७॥

तिनकै संगहि भई प्रगट इक बाल मनोहर ।
 अखिल-लोक-सुख-पुंज-मंजु-जीवन-देवी बर ॥
 दोउ-सुख-संपति-परम-मूल-धन-वृद्धि-रमा सी ।
 बहुरि-दरस-रस-अलह-लाहु-आनंद-प्रभा सी ॥३८॥

स्यामा सुघर अनूप-रूप गुन सील-सजीली ।
 मंडित-मृदु-मुख-चंद-मंद-मुसक्यानि-लजीली ॥
 काम-बाम-अभिराम-सहस-सोभा-सुभ-धारिनि ।
 साजे सकल सिंगार दिव्य हेरत हिय-हारिनि ॥३९॥

प्रियतम कौ लावन्य प्रिया की मंजु मिठौनी ।
 दोउ मिलि ताकैँ अंग-अंग अद्भुत मिठ-लौनी ॥
 सुखमा-संग उमंग महा महिमा की धारे ।
 मनहु रूप-गुन-सार मेलि तन अतन सँवारे ॥४०॥

प्रभु के पावन प्रबल भाव सौँ चाव चढ़ाई ।
 श्री राधा-कल-कृपा बानि की कानि पढ़ाई ॥
 गंगा नाम पुनीत स्रवन-रसना-मन-रंजिनि ।
 प्रबल-प्रभाव-अमोघ महा-अघ-ओघ-बिभंजिनि ॥४१॥

लागी ललकि लुभाइ स्यामसुंदर-मुख जोहन ।
 निज जोहन कैँ भाय बिस्व-मोहन-मन मोहन ॥
 ताकौ रूप अनूप अकथ गुन भाव लजैँहैँ ।
 लखि सोउ सुख सरसाइ भए रस-बस ललचैँहैँ ॥४२॥

निरखि नीठि निज ओर परति दुहुँ-दीठि कनौड़ी ।
 अनख-घटा अति सघन घूमि राधा-उर औँड़ी ॥
 उठी चमक चित भए सजल दृग-छोर छबीले ।
 प्रगटे सब्द कठोर भाव बरसे तरजीले ॥४३॥

देखि रोष कौ रंग गंग कछु सकुचि सकानी ।
 पुनि गुनि प्रेम-प्रसंग मनहिँ मन मृदु मुसकानी ॥
 सूच्छम बपु धरि बहुरि बेगि प्रभु-अंग समाई ।
 अर्धांगिनि को कहै भई सर्वांगिनि भाई ॥४४॥

रहे देव-गन मगन बिनय बहु बिस्तारन मैँ ।
 प्रभु के सगुन चरित्र-चित्र चित-पट-धारन मैँ ॥
 ब्रह्मद्रव कौ रूप दृगनि भरि देखि न पाए ।
 तातैँ ताके दरस-लाभ-हित बहुरि ललाए ॥४५॥

स्रुति-मंत्रनि बिस्तारि विविध अस्तुति विधि ठानी ।
 सुर-गन की अभिलाष-उमग कर जोरि बखानी ॥
 तब प्रभु परम उदार सकुचि स्वामिनि-मुख चाह्यौ ।
 उन स-मंद-मुसकानि अनुग्रह दृगनि उमाह्यौ ॥४६॥

तिहिँ अवसर सुख-पुंज मंजु सुभ-गुन-सरसाए ।
 सकल-सुकृत-फल-कल्प-बिटप-ऋतुराज सुहाए ॥
 सुनि सुर-गन-बर-बिनय गंग नाथहु मनसा ज्वै ।
 पद-नख तैँ पुनि प्रगट भई जल-रूप रुचिर है ॥४७॥

लखि वह पावन पाथ सकल मिलि माथ नवायौ ।
 बहु भाँतिनि अभिनंदि महा आनंद मनायौ ॥
 कोउ छ्वायौ लै सीस दृगनि कांउ अंजन कीन्यौ ।
 कोउ मार्जन कोउ उमगि आचमन करि सुख भीन्यौ ॥४८॥

प्रभु-चख चाहि उमाहि चतुर विधि भक्ति-भाव भरि ।
 लियौ कमंडल पूरि बेद-मंत्रनि मंडल करि ॥
 लहि प्रभु-दरस-प्रसाद देव मन मोद मढ़ाए ।
 करि करि दंड-प्रनाम सकल निज धामनि आए ॥४९॥

राखत सजग बिरंचि ताहि धारे निज छाती ।
जथा जुगावत सूम संचि संपति जिमि थाती ॥
ताही कै बल अकर-सुकर की कानि करत ना ।
अनमिल रचत प्रपंच रंच उर धरक धरत ना ॥५०॥

सुन्यौ गंग-गुन-ग्राम तात सुभ-धाम सुहायौ ।
कहत-मान जिहिँ लखौ छार औरै रँग छायौ ॥
गंग कहा यह गंग-कथा ऐसहि जहँ है है ।
सकल तहाँ कौ पाप-ताप-कलमष ध्रुव ध्वै है ॥५१॥

अब तुम तुरत तुरंग-संग निज पुर पग धारौ ।
सगरराज-मख-काज पूरि जग सुजस पसारौ ॥
पुनि करतव्य बिचारि बारि पावन सोइ आनौ ।
पितरनि तारन-हेत अपर कोउ जतन न जानौ ॥५२॥

इमि कहत कहत खगपति पुलकि प्रेम-बारि ढारन लगे ।
मनु मानस-मुकताहल हुलसि सुरसरि-सिर वारन लगे ॥५३॥



पंचम सर्ग

अंसुमान करि कान गंग-गुन-गान मनोहर ।
धरद्यौ संचि तिहिँ ध्यान माहिँ जिमि धर्म-धरोहर ॥
पुनि पितरनि के दुसह-दसा-दुख पर चित दीन्यौ ।
करि उसास कौ मंत्र आँसु सौँ तरपन कीन्यौ ॥ १ ॥

परि पायनि धरि धीर माँगि आयसु खगपति सौँ ।
चल्यौ कुँवर कर जोरि कुसल बिनवत जगपति सौँ ॥
कपिलदेव-पद पूजि पाइ कछु सांति सिरायौ ।
सुमिरत गंग तुरंग-संग सेना मैँ आयौ ॥ २ ॥

दै पताल लौँ नीव भानु-कुल-सुकृत-सदन की ।
श्री उतारि तहँ धारि सकल बृत्रारि-बदन की ॥
जड़ जमाइ भवितव्य भगीरथ-जस-बर बट की ।
सोधि खानि गंभीर भूति लै पुन्य-पुरट की ॥ ३ ॥

हय-पावन कौ हरष सोक पितरनि कौ धारे ।
कीन्यौ पलटि पयान कछुक उमगत मन मारे ॥
निकस्यौ सदल सपाति हुमसि हरियात बिबर तैँ ।
सगर-सौख्य-तरु कढ़्यौ उर्वरा के उर बर तैँ ॥ ४ ॥

स्त्रम करि काटत बाट बेगि बिन मग बिलबाए ।
हय-रच्छा-हित सकट-व्यूह अति विकट बनाए ॥
कीरति-मुकता-पुंज मंजु मग मैँ बगरावत ।
आए अवध-समीप सकल सुर सुकृत मनावत ॥ ५ ॥

समाचार यह पाइ धाइ आए अगवानी ।
परिजन पुरजन स्वजन सचिव सज्जन सेनानी ॥
प्रेम-बारि दृग ढारि लग्यौ कोउ ललकि जुहारन ।
कोउ असीस सुभ देन सीस कांउ मनि-गन वारन ॥ ६ ॥

सगर-सुतनि कौ समाचार तब लौं तहँ व्याप्यौ ।
सब मुख-कंजनि खिलत सोक-पाला परि छाप्यौ ॥
सादर चले लिवाइ सुभासुभ भाय बिचारत ।
बिकचत सकुचत मधुर छार जल नैननि ढारत ॥ ७ ॥

नृप-नंदहिँ अभिनंदि धीर गंभीर धरावत ।
सांति-पाठ सुभ पढ़त सदासिव-संकर ध्यावत ॥
उर आनंद सौं सोक सोक सौं आनंद मारे ।
पहुँचे ज्यौं त्यों आइ जज्ञ-मंडप कं द्वारे ॥ ८ ॥

तहँ बसिष्ठ कुल-इष्ट सिष्ट द्विज-गन सँग लीने ।
मिले आनि सुख मानि पढ़त मंगल मुद भीने ॥
अंसुमान परि पाय पाइ आसिष हरषायौ ।
पौरि-धूरि धरि सीस जज्ञसाला मैँ आयौ ॥ ९ ॥

नृपहिँ निरखि अकुलाइ धाइ पायनि लपटायौ ।
 छिति-पति उमगि उठाइ छोहि छाती छपटायौ ॥
 दै असीस सुभ सँधि सीस सादर बैठारथौ ।
 पै ज्यौँहीँ करि प्रेम छेम कौ प्रस्न उचारथौ ॥१०॥

परथौ करेजौ थामि थहरि त्यों रोइ कुँवर बर ।
 निकसे सकसि न बचन भयौ हिचकिनि गह्वर गर ॥
 आँसु ढारि भरि साँस सचिव-सुत तब अगुवायौ ।
 काहू बिधि सबिषाद बिषम संबाद सुनायौ ॥११॥

उमड़्या सोक-समुद्र भई बिप्लुत मख-साला ।
 बड़वागिनि सी लगन लगी जज्ञागिनि-ज्वाला ॥
 गयौ तुरत फिरि सब उछाह आनँद पर पानी ।
 बढी पीर की लहर धीर-मरजाद नसानी ॥१२॥

लगे सकल सिर धुनन कांड करुना कौ माच्यौ ।
 मनु बनाइ बहु बपुष बरुन तिहिँ मंडप नाच्यौ ॥
 लागीँ खान पछाड़ धाड़ मारन सब रानी ।
 मानहु माजा मज्जि तलफि सफरी अकुलानी ॥१३॥

भयौ भूप जड़-रूप अंग के रंग सिराए ।
 बज्राघात सहस्र साठ संगहिँ सिर आए ॥
 कढ़्यौ कंठ नहिँ बैन न नैननि आँसु प्रकास्यौ ।
 आनन भाव-बिहीन गाँव ऊजड़ लौं भास्यौ ॥१४॥

मुनिहूँ सकल हूँ बिकल लगे लोचन-जल मोचन ।
नृप की दारुन दसा देखि औरै कछु सोचन ॥
कोउ परखत मुख मलिन हाथ छाती कोउ लावत ।
अभिमंत्रित-जल-छीँट छिरकि कोउ सीस जगावत ॥१५॥

तब गुरुवर धरि धीर कियौ निर्धारित मन मैँ ।
कोसल-पति-कुसलात बनति केवल रोवन मैँ ॥
जौ अति उबलत सोक-सलिल दृग-पथ नहिँ पैहै ।
भूरि भाप सौँ पूरि तुरत तौ घट फटि जैहै ॥१६॥

मनुष-सुभाव-प्रभाव बहुरि गुनि मुनि बिज्ञानी ।
अति अचूक उपयुक्त जुक्ति ठानी हित-सानी ॥
अंसुमान कौँ पकरि पानि नृप अंग लगायौ ।
करुना-क्रंदन करत कुँवर कंपत लपटायौ ॥१७॥

लहि सन्निधि सम-सील पूत कं धरकत हिय की ।
अनुकंपित कछु भईँ सिरा नरपति जग-प्रिय की ॥
ज्यौँ कोउ तंत्री-बाज उठत कछु गाजि गमक सौँ ।
सम-सुर सात्म्य समीप-बाद की नाद धमक सौँ ॥१८॥

सनै सनै पुनि परन लगीँ नरपति की पलकैँ ।
आनन पर लहरान लगीँ प्राननि की झलकैँ ॥
तब बसिष्ठ इमि कह्यौ नृपति निरखौ निज नाती ।
काकौ यह असमंज कुँवर की सौँपत थाती ॥१९॥

यह सुनि करुना-भाव भूरि उर-अंतर जागे ।
 हूँ कातर बिललाइ फूटि नृप रोवन लागे ॥
 लहि अवसर उपयुक्त लगे गुरुवर समुभावन ।
 सिवि-दधीचि-हरिचद-कथा कहि धीर धरावन ॥२०॥

पुनि मुनि भृगु-बरदान गूढ़ पर ध्यान दिवायौ ।
 सुमति-सुमति-प्रति-बदित-बाक्य-आसय समुभायौ ॥
 अस्वमेध की बहुरि महा महिमा मुनि भाषी ।
 जिहि सिंहात करि विघन-पात सहसा सहसाखी ॥२१॥

कह्यौ न उचित विषाद-बाद मख-मंडप माहीं ।
 यामैं सोच असौच सोक कौ अवसर नाहीं ॥
 मानि मन्यु मन अकरमन्य हूँ जौ रहि जैहौ ।
 कुल-कीरति-अभिराम-सहित निज नाम नसैहौ ॥२२॥

तातैं धीरज धारि प्रथम मख-काज पुरावौ ।
 स्वर्ग-लोक मै अति बिसोक निज ओक बनावौ ॥
 पुनि गुनि करौ उपाय पाप तिनके भेटन कौ ।
 जातैं बनै बनाव बहुरि तहँ मिलि भेटन कौ ॥२३॥

अंसुमान तब उमगि गरुड़-इतिहास बखान्यौ ।
 पितरनि-तारन-हेत गंग-अवतारन ठान्यौ ॥
 बहुरि सगर-गर लागि मधुर बैननि समुभायौ ।
 साठ-सहस-छत-छन्न हियैं निज नेह लगायौ ॥२४॥

गुरु-निदेस सिसु-प्रेम नेम कुल-कानि-रखन कौ ।
मख-पूरन कौ भाव चाव पुनि सुतनि लखन कौ ॥
सब मिलि ह्वै घन सघन भूप-मन मंडप कीन्यौ ।
तापन-तपन निवारि नीर धीरज कौ दीन्यौ ॥२५॥

तब सम्हारि चित-वृत्ति सांति भूपति उर आनी ।
हरि-इच्छा धरि सीस मानि अंतर-हित-सानी ॥
गुरु-पद पूजि मनाइ ईस बिधिवत मख कीन्यौ ।
असन-बसन-गो-हेम-दान बिप्रनि कैँ दीन्यौ ॥२६॥

अस्वमेध सौँ ह्वै निवृत्त नृप पुर पग धार्यौ ।
सुरसरि-आनन कौ उपाय बहु भाय बिचार्यौ ॥
लाई घात अनेक बात नहिँ कछु बनि आई ।
ऐसहिँ सोच-बिचार माहिँ नृप-आयु सिराई ॥२७॥

अंसुमान तब भयौ भानु-कुल-कीरति-कारी ।
धर्म-धीर बर बीर प्रजा-परिजन-दुख-हारी ॥
सिंहासन-सौभाग्य मुकुट कौ मान-मढ़ैया ।
छात्र-छत्र कौ छेम चमर-चित चाव-चढ़ैया ॥२८॥

कछु दिन न्याय चुकाइ प्रजा-गन तिन परिपोषे ।
बिप्र पितर सुर दान मान पूजा सौँ तोषे ॥
रहत रहित-उतसाह सदा पितरनि हित सोचत ।
गुनत गरुड़-इतिहास गूढ़ लोचन जल मोचत ॥२९॥

निसि-दिन करत बिचार चारु सुरसरि ल्यावन कौ ।
 पितरनि तारि अपार छेम सौँ छिति छावन कौ ॥
 पै साधन-उपयुक्त जुक्ति कोउ चित्त चढ़ति ना ।
 सोइ चिंता की सदा-चुभति नट-साल कढ़ति ना ॥३०॥

एक दिन गुरु-गृह जाइ पाय परि अति मृदु बानी ।
 करि अस्तुति बहु भाँति भूरि-स्रद्धा-सरसानी ॥
 कष्टौ जोरि जुग हाथ अनुग्रह नाथ तिहारैँ ।
 सुख संपति सौभाग्य जदपि सब साथ हमारैँ ॥३१॥

तउ पितरनि की दुसह-दसा-चिंता नित जागति ।
 परत न चल चित चैन नैन निद्रा नहिँ लागति ॥
 प्रन कैँ भार अपार सदा सिर रहत निचौँहैं ।
 अवलोकत सब जगत लगत निज ओर हँसौँहैं ॥३२॥

सगर-सुतनि की सुनी दसा दारुन-दुख-सानी ।
 सुरसरि-महिमा मंजु गरुड़ की गूढ़ कहानी ॥
 तम सर्वज्ञ सुजान भानु-कुल-नित-हितकारी ।
 धरहु माथ मुनि-नाथ हाथ गुनि आरत भारी ॥३३॥

सुरधुनि आनन कौ उपाय करुना करि भाषौ ।
 होइ सुगम कै अगम सकुच गहि गोइ न राखौ ॥
 अंसुमान की देखि दसा कातर मुनि-नायक ।
 कहे पुलकि भरि नैन बैन इमि धीरज-दायक ॥३४॥

धन्य भानु-कुल-भानु धन्य जग जनम तिहारौ ।
 तुम बिन कौन महान ठान यह ठाननहारौ ॥
 तुम बुधि-बल-गुन-धाम बीर छत्री-व्रत-धारी ।
 होहु न आतुर सुनहु धीर धरि बात हमारी ॥३५॥

बिसद बिहंगम-राज गंग-महिमा जो भाषी ।
 ताके सत्य-प्रमान माहिँ हमहूँ सुचि साखी ॥
 महा पाप अरु साप सकल सो टारि सकति है ।
 साठ सहस की कहा जगत उद्धारि सकति है ॥३६॥

कोउ न असंभव काज न कछु दुस्तर तिहिँ आगे ।
 ताकौ गुन-गन गुनत रहत जम-गन भय-पागे ॥
 जो करि जुक्ति अनेक सुकवि अत्युक्ति प्रकासै ।
 सो सब गंग-प्रसंग माहिँ सहजोक्तिहि भासै ॥३७॥

पै अति दुस्तर काज भूमि ताकौ संचारन ।
 तारन कठिन न ताहि कठिन ताकौ अवतारन ॥
 फनि जिमि मनि तिमि रहत सदा बिधि ताहि जुगाए ।
 स्तुति-बिधि-रच्छित मंजु कमंडल माहिँ पुगाए ॥३८॥

जो कोउ कष्ट उठाइ जाइ सेवै गिरि कानन ।
 साधि तपस्या उग्र इतौ तोषै चतुरानन ॥
 कै वह सहसा उमगि देहि कछु वह जल पावन ।
 तौ आवै महि गंग होइ सब काज सुहावन ॥३९॥

यह सुनि मुनि-पद पूजि तुरत नृप आज्ञा लीनी ।
 तप-विधि संजम-नियम-रीति उर अंकित कीनी ॥
 लहि आयसु हरषाइ आइ निज गेह गुहार्यौ ।
 मंत्री मित्र कलत्र पुत्र सब आनि जुहार्यौ ॥४०॥

दै दिलीप कौं राज विविध नृप-काज बुझायौ ।
 मंत्रिनि मित्रनि सौंपि प्रजा-पालन समुझायो ॥
 बर-विहंगपति-बदित गंग-महिमा सब भाषो ।
 बहुरि दई दृढ़ आन राखि दिग-पालनि साखी ॥४१॥

जो इहिँ आसन होइ राज-सासन-अधिकारी ।
 सुरसरि-आनन-हेत करै कानन तप भारी ॥
 जब लौं कोउ पतंग-बंस महि गंग न आनै ।
 तब लौं सलभ पतंग-अर्थ इहिँ कुल-हित मानै ॥४२॥

यौं कहि चले भुआल नेह नातौ सब तोरे ।
 सुरपुर-दुर्लभ राज-सदन-सुख सौं मुख मोरे ॥
 कियौ जाइ हिमवंत-सिखर तप महा कठिन तिन ।
 अंत लख्यौ सुरलाक-बास बीतैँ आयुस-दिन ॥४३॥

तब दिलीप तप-काज बिदा मांगी गुरुवर सौं ।
 पै तिन जान न दियौ ग्रस्त गुनि रोग-रगर सौं ॥
 रोगी ऋनिया अंग-भंग आतुर अविचारी ।
 ये नहिँ काहू भाँति तपस्या के अधिकारी ॥४४॥

करि प्रकास कछु काल अंत अथयौ वह पूषन
भए भगीरथ भूप भव्य भारत के भूषन ॥
दृढ़-व्रत धर्म-धुरीन दीन - दुख - दंद - निवारी ।
ईस-भक्त द्विज-पितर-साधु-गो-द्विज-हितकारी ॥४५॥

जाको प्रखर प्रताप ताप सौं अरि-उर तावत ।
हंस-बंस-सुभ-सुजस-कलानिधि-द्युति दमकावत ॥
संपति मानि सुहाग चलति जापै उमगानी ।
करत कामना कछुक सिद्धि आवति अगवानी ॥४६॥

कीन्यौ भूप बिचार धार पावनि पावन कौ ।
सगर-कुमारनि पिता-पास पुनि पहुँचावन कौ ॥
सकल जगत-हित साधि अटल कीरति छावन कौ ।
स्वकुल ब्रह्म-अवतार-जोग महिमा ठावन कौ ॥४७॥

जुबा बैस पर मानि जानि संतान न आगे ।
कीन्यौ कछुक बिलंब अंब संकर अनुरागे ॥
अंसुमान की आन ध्यान करि पुनि मन माष्यौ ।
उहै अवस्था माहिँ जान कानन अभिलाष्यौ ॥४८॥

सोच्यौ जौ यह बयस बृथा ऐसहिँ चलि जैहै ।
तौ उतरत दिन माहिँ कठिन तप पार न पैहै ॥
अंसुमान इहिँ हेत कछुक पायौ करि नाही ।
यातै उचित बिलंब नाहिँ सुभ कारज माही ॥४९॥

यह बिचारि नृप राज-भार मंत्रिनि सिर धार्यौ ।
 दान मान सौँ तोषि सबनि इमि बचन उचार्यौ ॥
 अब हम तप-हित जात गंग जासौँ महि आवै ।
 होइ मिलन पुनि आइ ईस जौ आस पुरावै ॥५०॥

बहुरि जाइ गुरु-गेह नेह-जुत माथ नवायौ ।
 कहि मृदु बचन बिनीत सकल संकल्प सुनायौ ॥
 सिख आसिष बहु भाँति पाइ सब संसय सार्यौ ।
 करि प्रनाम उर सुमिरि ईस बन-मग पग धार्यौ ॥५१॥

इमि कर्मबीर सहसा भवन त्यागि गवन कानन कियौ ।
 छुट स्रद्धा साहस धीर अरु धर्म न कछु निज सँग लियौ ॥५२॥



षष्ठ सर्ग

जाइ गोकरन-धाम नृपति अति आनंद पायौ ।
मनु गज तोरि अलान उमगि कदली-बन आयौ ॥
सिद्धि-छेत्र सुभ देखि नेत्र तहँ ललकि लुभाए ।
मनहु सोधि मनि-खानि-सोध सोधी हुलसाए ॥ १ ॥

तरु बल्ली बहु भाँति फलित प्रफुलित तहँ भावैँ ।
मनहु कामना सफल होन के सगुन दिखावैँ ॥
सर सरिता सब स्वच्छ जथा-इच्छित जल पावत ।
मनु मन-आसय पूर होन के जोग जतावत ॥ २ ॥

गुंजत मंजु मलिंद-पुंज मकरंद-अघाए ।
मनहु मुदित मन करत तोष के घोष सुहाए ॥
पसु-पच्छिनि के बृंद करत आनंद-नाद कल ।
धन्यवाद मनु देत पाइ बांछित जीवन-फल ॥ ३ ॥

बिद्याधर गंधर्व सिद्ध तप-वृद्ध सयाने ।
बिचरत तहाँ बिनोद-मोद-मंडित मनसाने ॥
मुनि-आस्रम अभिराम ठाम-ठामनि छबि छावैँ ।
साधक-गन पैँ सिद्धि तहाँ खोजति चलि आवैँ ॥ ४ ॥

सो सुभ धाम ललाम देखि भूपति-मन मान्यौ ।
 तहँ तप-कष्ट उठाइ इष्ट-साधन ठिक ठाम्यौ ॥
 पूजि छेत्र-पति पुलकि माँगि आयसु मुनि-गन सौँ ।
 लगे भूप-मनि करन कठिन जप तप तन मन सौँ ॥ ५ ॥

कंद मूल तिन करि अहार कछु बार बिताए ।
 कछुक दिवस तृन पात परे पुहुमी चुनि खाए ॥
 कछु दिन बारि बयारि पान करि कछु दिन टेरे ।
 इहिँ बिधि कष्ट उठाइ किए व्रत घोर घनेरे ॥ ६ ॥

रह्यौ भूप कौ रूप भावना के लेखा सौ ।
 अस्ति नास्ति कैँ बीच गनित-कल्पित रेखा सौ ॥
 सुर-मुनि अग्र समग्र देखि तप उग्र सिहाए ।
 नृपहिँ निवारन-हेत सबनि बहु हेत बुझाए ॥ ७ ॥

रहे ध्यान धरि जपत भूप बिधि-मंत्र निरंतर ।
 भरि जिय यहै उमंग गंग आवैँ अवनी पर
 तरैँ सगर के सुवन भुवन मुद मंगल छावै ।
 डरैँ देखि जम-दूत पुरी पुरहूत बसावै ॥ ८ ॥

बीते बरस अनेक टेक जब नैँकु न टारी ।
 सह्यौ सीस धरि धीर बीर हिम आतप बारी ॥
 तब ताकैँ तप-तेज तपन लाग्यौ महि-मंडल ।
 उफनि उठ्यौ ब्रह्मंड भभरि भय भर्यौ अखंडल ॥ ९ ॥

सुर नर मुनि गंधर्व जच्छ किन्नर कहलाने ।
नभ-जल-थल-चर बिकल सकल थल थल हहलाने ॥
जानि परद्यौ त्रिपुरारि तमकि तीजौ दृग खोल्यौ ।
त्रासनि परी पुकार चारमुख-आसन डोल्यौ ॥१०॥

लै सँग देव-समाज काज बिसराइ जगत कौ ।
उठि आतुर अकुलाइ ल्याइ मन भाय भगत कौ ॥
चले प्रसंसत हँसत हंस हाँकत चतुरानन ।
पहुँचे आनि तुरंत तपत भूपति जिहिँ कानन ॥११॥

कृपा-छलक-छवि नैन बैन गद्गद मुख मुलकित ।
बर बरदान-उमंग-तरंगनि सौँ तन पुलकित ॥
मृदुल मनोहर उर-उछाह-कारी स्रम-हारी ।
सुघर सन्द सौँ कलित ललित विधि गिरा उचारी ॥१२॥

अहो भूप-कुल-कमल-अमल-अति-प्रबल-प्रभाकर ।
कियौ कठिन तप जाहि निरखि रबि लगत सुधाकर ॥
जाकैँ प्रखर प्रभाव पदारथ परम सुलभ सब ।
तजि सँकोच जो चहहु लहहु सानँद हमसौँ अब ॥१३॥

सुनत बैन सुख-दैन भगीरथ नैन उधारे ।
बिबुधनि-बलित प्रसन्न-बदन विधि निकट निहारे ॥
तप-तापैँ तन परी सुखद आसा-जल-धारा ।
सुधा स्रवन भरि चली उबरि ढरि नैननि द्वारा ॥१४॥

सरक्यौ सब दुख-दंद चंद-आनन मुद छरक्यौ ।
 फरक्यौ सुभग सरीर चीर बलकल कौ दरक्यौ ॥
 जोरि पानि परि भूमि भूमि-पति सिर पद परसे ।
 सब देवनि सादर प्रनाम करि अति सुख सरसे ॥१५॥

पाद अरघ आसन सुमूल फल फूल सुहाए ।
 अरपि जथा-बिधि बिनय-बचन कर जोरि सुनाए ॥
 जय चतुरानन चतुर चतुर-जुग-जगत-बिधायक ।
 जय सुर-नर-मुनि-बंध सदा सुंदर-बर-दायक ॥१६॥

तव दरसन सौं आज काज पूजे सब मन के ।
 लखि यह देव-समाज साज छाए सुख-गन के ॥
 धर्यौ माथ पर हाथ नाथ तौ देहु यहै बर ।
 तारन-बिरद-उतंग गंग आवै पुहुमी पर ॥१७॥

असन बसन बर बाम धाम भव-बिभवन चाहै ।
 सुरपुर-सुख बिज्ञान मुक्तिहूँ पै न उमाहै ॥
 अति उदार करतार जदपि तुम सरबस-दानी ।
 हम लघु जाचक चहत एक चिल्लू-भर पानी ॥१८॥

ताही सौं तप-ताप दूरि करि अंग जुड़ैहै ।
 ताही सौं सब साप-दाप पितरनि के जैहै ।
 ताही सौं जग सकल महा मुद मंगल छैहै ।
 ताही सौं सुख पाइ लाख अभिलाष परैहै ॥१९॥

यह सुनि मृदु मुसकाइ चतुर चतुरानन भाष्यौ ।
 धन्य धन्य महि-पाल मही-हित पर चित राख्यौ ॥
 तुम्है न कछुहुँ अदेय एक यह असमंजस पर ।
 गंग-धार कौ बेग धरै किमि धरनि धरा-धर ॥२०॥

धमकि धूम सौं धाड़ धँसै जबहीं ब्रह्मद्रव ।
 उथलपथल तल होइ रसातल मचहि उपद्रव ॥
 जगत जलाहल होइ कुलाहल त्रिभुवन व्यापै ।
 है सनद्ध कटिबद्ध कौन थिरता फिरि थापै ॥२१॥

तातै कहत उपाय एक अतिसय हितकारी ।
 आराधौ तुम आसुतोष संकर त्रिपुरारी ॥
 सो सब भाँति समर्थ अर्थ-दायक चित-चाहे ।
 करत न नैकु विचार चार फल देत उमाहे ॥२२॥

बिकल सकल जग जोहि छोहि करुना जिन धारी ।
 निधरक धरि गर गरल सुरासुर-बिपति बिदारी ॥
 गर्ब खर्ब करि सर्व कठिन कालहु दुर्दर कौ ।
 चिर जीवन थिर कियौ मारकंडे मुनिबर कौ ॥२३॥

सोइ इक सकत सँभारि गंग कौ बेग विपुल बर ।
 करि जु कृपा बर देहि लेहि यह काज सीस पर ॥
 सकल मनोरथ होहि सिद्ध तब तुरत तिहारे ।
 यौ कहि बिधि सब सुरनि सहित निज लोक सिधारे ॥२४॥

यह सुनि महा धीर भूपति-मन नैँकु डग्यौ ना ।
 संसय संका सोक सोच मैँ पलहुँ पग्यौ ना ॥
 बरु बाढ़ी चित चोप ओप आनन पर आई ।
 अमित उमंग-तरंग अंग-अंगनि मैँ छाई ॥२५॥

अब तौ हम सुभ ढंग गंग-आवन कौ पायौ ।
 पारावार-अपार-परे कौँ पार लखायौ ॥
 यह बिचार निर्धारि हियैँ आनँद सरसायौ ।
 धन्यबाद है नीर निकरि नैननि तैँ आयौ ॥२६॥

पुनि लागे तप तपन जपन संकर दुख-भंजन ।
 बर-दायक करुना-निधान निज-जन-मन-रंजन ॥
 इक अँगुठा है ठाढ़ गाढ़ व्रत संजम लीने ।
 सहे बिबिध दुख गहे मौन इक दिसि मन दीने ॥२७॥

खान पान बस किए नीँद नारी बिसराए ।
 और ध्यान सब धोइ देवधुनि की धुनि लाए ॥
 गयौ बीति इहिँ रीति एक संबतसर सारौ ।
 उठ्यौ गगन लौँ गाजि भूप कौ सुजस-नगारौ ॥२८॥

तब तजि अचल समाधि आधि-हर संकर जागे ।
 निज-जन-दुख मन आनि कसकि करुना सौँ पागे ॥
 आतुर चले उमंग-भरे भंगहु नहिँ छानी ।
 कृपा-कानि बरदान-देन-हित हिय हुलसानी ॥२९॥

डगमग पग मग धरत तजे बरदहु हरबर सौँ ।
 आए तिहिँ बन सघन बिभूषित जो नरबर सौँ ॥
 देखि भूप कौ कृसित रूप नैननि जल छाथौ ।
 सुंगी-नाद बिषाद-हरन सुख-करन बजाथौ ॥३०॥

दृग उधारि त्रिपुरारि निरखि नृप निपट चकाए ।
 रहे ललकि छबि-छकित पलक बिन पलक गिराए ॥
 सुंदर अमल अनूप भव्य भव-रूप सुहायौ ।
 मनु तप-तेज-स्वरूप भूप-आगैँ चलि आयौ ॥३१॥

हेम-बरन सिर जटा चंद-छबि-छटा भाल पर ।
 कलित कृपां की कटा-घटा लोचन बिसाल पर ॥
 फनि-पति-हार-बिहार-भूमि बच्छस्थल राजै ।
 जग-अवलंब प्रलंब भुजनि फरकति छबि छाजै ॥३२॥

दृढ़ कटि-धाम ललाम चाम सुभ दुरद-दुवन कौ ।
 गूढ़ जानु जो भार भरत सहजहिँ त्रिभुवन कौ ॥
 अरुन-कोकनद चरन सरन जो असरन जन के ।
 जिनकौ गुन-गुंजार करत मन-अलि मुनि-गान के ॥३३॥

गौर सरीर बिभूति भूति त्रिभुवन की सोहै ।
 आनन परम-उदार-प्रकृति-छबि-छलक बिमोहै ॥
 डमगि कृपा कौ बारि पगनि डगमग उपजावत ।
 तकि तकि तांडव नचत दमकि-दम डमरु बजावत ॥३४॥

मानि कामना सिद्ध जानि तूठे दुख-हारी ।
 भयौ भूप-मन मगन बढैँ आनँद-नद भारी ॥
 किं-कर्तव्य-बिमूढ़ गूढ़ भायनि भरि भाए ।
 रहे थकित से दंग छनक बिन अंग डुलाए ॥३५॥

पुनि कछु धीर बटेरि जोरि कर परे धरनि पर ।
 बरुनिनि भारत पाय पखारत नैन-नीर-भर ॥
 कंषित गात लखाति प्रेम-पुलकावलि बिकसति ।
 उमगि कंठ लौँ आइ बात हिचकी है निकसति ॥३६॥

यह करुनामय दृश्य संभु प्रनतारति-हारी ।
 सके न देखि बिसेषि भक्त-दुख भए दुखारी ॥
 नृपहिँ और कछु करन कहन कौ ठौर न दीन्यौ ।
 अंतरजामी जानि भाव अंतर कौ लीन्यौ ॥३७॥

भुज उठाइ हरषाइ बाँकुरौ विरद सँभार्यौ ।
 दियौ बिसद बर-राज भूप कौ काज सँवार्यौ ॥
 हम लैहैँ सिर गंग दंग जग होहि जाहि ज्वै ।
 यौँ कहि अंतर्धान भए नृप रहे चकित है ॥३८॥

उठि महि सौँ महिपाल लगे चारौँ दिसि हेरन ।
 कृपा-सिंधु करुना-निधान कहि इत उत टेरन ॥
 सिव कौ सुखद स्वरूप चखनि भरि चहन न पाए ।
 मन की मनहीँ रही हाय कछु कहन न पाए ॥३९॥

इहिँ गिलानि की आनि घटा आसा धुँधराई ।
 भयौ मंद मुख-चंद दंद-उम्भस उमगाई ॥
 पै गुनि हर के बैन नैन आनँद-रस बरसे ।
 जप तप कौ करि बिहित बिसर्जन अति सुख सरसे ॥४०॥

इहिँ भाँति भगीरथ भूप बर साधि जोग जप तप प्रखर ।
 लीन्यौ सिहात जिहिँ लखि अमर मान-सहित चित-चहत बर ॥४१॥



सप्तम सर्ग

तब नृप करि आचमन मारजन सुचि-रुचि-कारी ।
प्रानायाम पुनीत साधि चित-वृत्ति सुधारी ॥
बहुरि अंजली बाँधि ध्यान बिधि कौ बिधिवत गहि ।
माँगी गंग उमंग-सहित पूरब प्रसंग कहि ॥ १ ॥

बद्ध-अंजली देखि भूप बिनवत मृदु बानी ।
मुसकाने बिधि आनि चित्त “चिल्लू-भर पानी” ॥
लागे करन बिचार बहुरि जग-हित-अनहित पर ।
पाप-पुन्य-फल-उचित-लाभ-मर्याद खचित पर ॥ २ ॥

पुनि गुनि बर बरदान आपनौ औ संकर कौ ।
सगर-सुतनि कौ साप-ताप तप नर-पति बर कौ ॥
सुमिरि अखिल-ब्रह्मांड-नाथ मन माथ नवायौ ।
सब संसय करि दूरि गंग-दैवौ ठिक ठायौ ॥ ३ ॥

किए सजग दिग-पाल ब्याल-पति-हृदय दृढ़ायौ ।
कोल कमठ पुचकारि भूधरनि धीर धरायौ ॥
स्वस्ति-मंत्र पढ़ि तानि तंत्र मुद-मंगल-कारी ।
लियौ कमंडल हाथ चतुर चतुरानन-धारी ॥ ४ ॥

इत सुरसरि की धाक धमकि त्रिभुवन भय-पागे ।
सकल सुरासुर बिकल बिलोकन आतुर लागे ॥
दहलि दसौं दिग-पाल बिकल-चित इत उत धावत ।
दिग्गज दिग दंतनि दबोचि दृग भभरि भ्रमावत ॥ ५ ॥

नभ-मंडल थहरान भानु-रथ थकित भयौ छन ।
चंद चकित रहि गयौ सहित सिगरे तारागन ॥
पौन रह्यौ तजि गौन गह्यौ सब भौन सनासन ।
सोचत सबै सकाइ कहा करिहै कमलासन ॥ ६ ॥

बिंध्य - हिमाचल - मलय-मेरु-मंदर-हिय हहरे ।
ढहरे जदपि पषान ठमकि तउ ठामहिँ ठहरे ॥
थहरे गहरे सिंधु पर्व बिनहूँ लुरि लहरे ।
पै उठि लहर-समूह नैँकु इत उत नहिँ ढहरे ॥ ७ ॥

गंग कह्यौ उर भरि उमंग तौ गंग सही मैँ ।
निज तरंग-बल जौ हर-गिरि हर-संग मही मैँ ॥
लै स-बेग-बिक्रम पताल-पुरि तुरत सिधाऊँ ।
ब्रह्म-लोक कौँ बहुरि पलटि कंदुक-इव आऊँ ॥ ८ ॥

सिव सुजान यह जानि तानि भौँहनि मन माषे
बाढ़ी-गंग-उमंग-भंग पर उर अभिलाषे ॥
भए सँभरि सन्नद्ध भंग कैँ रंग रँगाए
अति दृढ़ दीरघ सृंग देखि तापर चलि आए ॥ ९ ॥

बाघंबर कौ कलित कच्छ कटि-तट सौं नाभ्यौ ।
 सेसनाग कौ नागबंध तापर कसि बाँध्यौ ॥
 ब्याल-माल सौं भाल बाल-चंदहिँ दृढ़ कीन्यौ ।
 जटा-जाल कौ भाल-ब्यूह गह्वर करि लीन्यौ ॥१०॥

मुंड-माल यज्ञोपवीत कटि-तट अटकाए ।
 गाड़ि सूल सृंगी डमरू तापर लटकाए ॥
 बर बाहँनि करि फेरि चाँपि चटकाइ आँगुरिनि ।
 बच्छस्थल उमगाइ ग्रीव उचकाइ चाय भिनि ॥११॥

तमकि ताकि भुज-दंड चंड फरकत चित चोपे ।
 महि दबाइ दुहुँ पाय कछुक अंतर सौं रोपे ॥
 मनु बल-बिक्रम-जुगल-खंभ जग-थंभन-हारे ।
 धीर-धरा पर अति गँभीर-दृढ़ता-जुत धारे ॥१२॥

जुगल कंध बल-संध हुमकि हुमसाइ उचाए ।
 दोउ भुज-दंड उदंड तोलि ताने तमकाए ॥
 कर जमाइ करिहायँ नैन नभ-ओर लगाए ।
 गंगागम की बाट लगे जोहन हर ठाए ॥१३॥

बल बिक्रम पारुष अपार दरसत अँग-अँग तैँ ।
 बीर रौद्र दोउ रस उदार भलकत रँग-रँग तैँ ॥
 मनहु भानु-सितभानु-किरन-बिरचित पट बर की ।
 भलक दुरंगी देति देह-द्युति सिवसंकर की ॥१४॥

बचन-बद्ध त्रिपुरारि ताकि सन्नद्ध निहारत ।
 दियौ ढारि बिधि गंग-बारि मंगल उच्चारत ॥
 चली बिपुल-बल-बेग-बलित बाढ़ति ब्रह्मद्रव ।
 भरति भुवन भय-भार मचावति अखिल उपद्रव ॥१५॥

निकसि कमंडल तैँ उमंडि नभ-मंडल खंडति ।
 घाई धार अपार बेग सौँ बायु बिहंडति ॥
 भयौ घोर अति सब्द धमक सौँ त्रिभुवन तर्जे ।
 महा मेघ मिलि मनहु एक संगहिँ सब गर्जे ॥१६॥

भरके भानु-तुरंग चमकि चलि मग सौँ सरके ।
 हरके बाहन रुकत नैँ कु नहिँ बिधि हरि हर के ॥
 दिग्गज करि चिक्कार नैन फेरत भय-थरके ।
 धुनि प्रतिधुनि सौँ धमकि धराधर के उर धरके ॥१७॥

कढ़ि-कढ़ि गृह सौँ बिबुध बिबिध जाननि पर चढ़ि-चढ़ि ।
 पढ़ि-पढ़ि मंगल-पाठ लखत कौतुक कछु बढ़ि-बढ़ि ॥
 सुर-सुंदरी ससंक बंक दीरघ दृग कीने ।
 लगीँ मनावन सुकृत हाथ काननि पर दीने ॥१८॥

निज दरेर सौँ पौन-पटल फारति फहरावति ।
 सुर-पुर के अति सघन घोर घन घसि घहरावति ॥
 चली धार धुधकारि धरा-दिसि काटति कावा ।
 सगर-सुतनि के पाप-ताप पर बोलति धावा ॥१९॥

बिपुल बेग सौँ कबहुँ उमगि आगे कौँ धावति ।
 सौ सौ जोजन लौँ सुढार ढरतिहिँ चलि आवति ॥
 फटिकसिला के बर बिसाल मन बिस्मय बोहत ।
 मनहु बिसद छद अनाधार अंबर मैँ सोहत ॥२०॥

स्वाति-घटा घहराति मुक्ति-पानिप सौँ पूरी ।
 कैधौँ आवति भुकति सुभ्र-आभा-रुचि रूरी ॥
 मीन-मकर-जल-ब्यालनि की चल चिलक सुहाई ।
 सो जनु चपला चमचमाति चंचल-छबि-छाई ॥२१॥

रुचिर रजतमय कै बितान तान्यौ अति बिस्तर ।
 भिरतिँ बूँद सो भिलिमिलाति मोतिनि की भालर ॥
 ताके नीचैँ राग-रंग के ढंग जमाए ।
 सुर-बनितनि के वृंद करत आनंद-बधाए ॥२२॥

बर-बिमान-गज-बाजि-चढ़े जो लखत देव-गन ।
 तिनके तमकत तेज दिव्य दमकत आभूषन ॥
 प्रतिबिंबित जब होत परम प्रसरित प्रवाह पर ।
 जानि परत चहुँ ओर उए बहु बिमल बिभाकर ॥२३॥

कबहुँ सु धार अपार-बेग नीचे कौँ धावै ।
 हरहराति लहराति सहस जोजन चलि आवै ॥
 मनु बिधि चतुर किसान पौन निज मन कौ पावत ।
 पुन्य-खेत-उतपन्न हीर की रासि उसावत ॥२४॥

कै निज नायक बँध्यौ बिलोकत ब्याल-पास तैँ ।
तारनि की सेना उदंड उतरति अकास तैँ ॥
कै सुर-सुमन-समूह आनि सुर-जूह जुहारत ।
हर हर करि हर-सीस एक संगहि सब डारत ॥२५॥

छहरावति छबि कबहुँ कोऊ सित सघन घटा पर ।
फबति फैलि जिमि जोन्ह-छटा हिम-प्रचुर-पटा पर ॥
तिहिँ धन पर लहराति लुरति चपला जब चमकै ।
जल-प्रतिबिंबित दीप-दाम-दीपति सी दमकै ॥२६॥

कबहुँ बायु-बल फूटि छूटि बहु बपु धरि धावै ।
चहुँ दिसि तैं पुनि डटति सटति सिमटति चलि आवै ॥
मिलि-मिलि द्वै-द्वै चार-चार सब धार सुहाई ।
फिरि एकै है चलति कलित बल बेग बड़ाई ॥२७॥

जैसैँ एकै रूप प्रबल माया-बस मैँ परि ।
बिचरत जग मैँ अति अनूप बहु बिलग रूप धरि ॥
पै जब ज्ञान-विधान ईस-सनमुख लै आवै ।
तब एकै है बहुरि अमित आतम-बल पावै ॥२८॥

जल सौँ जल टकराइ कहूँ उच्छलत उमंगत ।
पुनि नीचैँ गिरि गाजि चलत उत्तंग तरंगत ॥
मनु कागदी कपोत गोत के गोत उड़ाए ।
लरि अति ऊँचैँ उलरि गोति गुथि चलत सुहाए ॥२९॥

कहूँ पौन-नट निपुन गौन कौ बेग उधारत ।
जल-कंदुक के बृंद पारि पुनि गहत उछारत ॥
मनौ हंस-गन मगन सरद-बादर पर खेलत ।
भरत भाँवरै^५ जुरत मुरत उलहत अवहेलत ॥३०॥

कबहुँ बायु सौँ बिचलि बंक-गति लहरति धावै ।
मनहु सेस सित-बेस गगन तै^५ उतरत आवै ॥
कबहुँ फेन उफनाइ आइ जल-तल पर राजै ।
मनु मुकतनि की भीर छोर-निधि पर छबि छाजै ॥३१॥

कबहुँ सुताड़ित हूँ अपार-बल-धार-बेग सौँ ।
छुभित पौन फटि गौन करत अतिसय उदेग सौँ ॥
देवनि के दृढ़ जान लगत ताके भकभोरे ।
कोउ आँधी के पोत होत कोउ गगन-हिँडोरे ॥३२॥

उड़ति फुही की फाब फबति फहरति छबि-छाई ।
ज्यौँ परबत पर परत भीन बादर दरसाई ॥
तरनि-किरन तापर बिचित्र बहु रंग प्रकासै ।
इंद्र-धनुष की प्रभा दिव्य दसहूँ दिसि भासै ॥३३॥

मनु दिगंगना गंग न्हाइ कीन्हे निज अंगी ।
नव भूषन नव-रत्न-रचित सारी सत-रंगी ॥
गंगागम-पथ माहि^५ भानु कैधौँ अति नीकी ।
बाँधी बंदनवार बिबिध बहु पटापटो की ॥३४॥

इहिँ बिधि धावति धँसति ढरति ढरकति सुख-देनी ।
मनहु सबारति सुभ सुर-पुर की सुगम निसेनी ॥
बिपुल बेग बल बिक्रम कैँ ओजनि उमगाई ।
हरहराति हरषाति संभु-सनमुख जब आई ॥३५॥

भई थकित छबि-छकित हेरि हर-रूप मनोहर ।
हैं आनहि के प्रान रहे तन धरे धरोहर ॥
भयौ कोप कौ लोप चोप औरै उमगाई ।
चित चिकनाई चढ़ी कढ़ी सब रोष-रुखाई ॥३६॥

छोभ-छलक है गई प्रेम की पुलक अंग मैँ ।
थहरन के ढरि ठंग परे उछरति तरंग मैँ ॥
भयौ बेग उद्वेग पेँग छाती पर धरकी ।
हरहरान धुनि बिघटि सुरट उघटी हर-हर की ॥३७॥

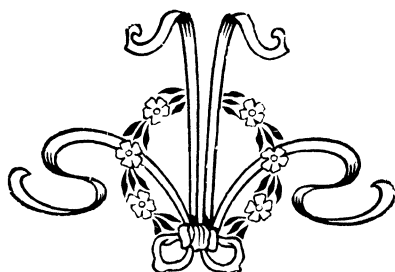
भयौ हुतौ भ्रू-भंग-भाव जो भव-निदरन कौ ।
तामैँ पलटि प्रभाव परशौ हिय हेरि हरन कौ ॥
प्रगटत सोइ अनुभाव भाव औरै सुखकारी ।
हैं थाई उतसाह भयौ रति कौ संचारी ॥३८॥

कृपानिधान सुजान संभु हिय की गति जानी ।
दियौ सीस पर ठाम बाम करि कै मन मानी ॥
सकुचति ऐँचति अंग गंग सुख-संग लजानी ।
जटा-जूट-हिम-कूट सघन बन सिमिटि समानी ॥३९॥

पाइ ईस कौ सीस-परस आनँद अधिकायौ ।
 सोइ सुभ सुखद निवास बास करिबौ मन ठायौ ॥
 सीत सरस संपर्क लहत संकरहु लुभाने ।
 करि राखी निज अंग गंग कै रंग भुलाने ॥४०॥

बिचरन लागी गंग जटा-गह्वर-बन-बीथिनि ।
 लहति संभु-सामीप्य-परम-सुख दिननि निसीथिनि ॥
 इहि बिधि आनँद मै अनेक बीते संबत्सर ।
 छोड़त छुटत न बनत ठनत नव नेह परस्पर ॥४१॥

यह देखि दुखित भूपति भए चित चिंता प्रगटी प्रबल ।
 अब कीजै कौन उपाय जिहि सुरसरि आवै अवनि-तल ॥४२॥



अष्टम सर्ग

पुनि नृप उर धरि धीर बरद संकर आराधे ।
बिबिध जोग जप जज्ञ नेम व्रत संजम साधे ॥
इक पग ऊपर उनइ सनय बहु बिनय बखानी ।
जोरि पानि मृदु बानि सानि ढारत दृग पानी ॥ १ ॥

जय जय भव-भय-हरन दरन दुख-दंद दयामय ।
जय जय तरुनादित्य-तेज करुना-बरुनालय ॥
जय जय असरन-सरन-भरन जग-बिपति-बिदारन ।
जय जय औढर-सरनि-ढरन सुरसरि-सिर-धारन ॥ २ ॥

व्यापक ब्रह्म-स्वरूप भूप करि सुर जिहिँ जानत ।
कहि कहि अकह-अनूप-रूप जिहिँ बेद बखानत ॥
जय जय दीन-दयाल प्रनत-प्रतिपाल पुरारी ।
काम-क्रोध-मद-मोह-रहित सेवक-हितकारी ॥ ३ ॥

कीन्यौ नाथ सनाथ माथ सुरसरि जो धारी ।
तुम बिन सकत सम्हारि कौन ताकौ बल भारी ॥
सकल सुरासुर कौ अपार भय-भार निवारथौ ।
राख्यौ पैज-प्रमान दियौ बरदान सँभारथौ ॥ ४ ॥

पै कृपाल नहिँ होइ कामना सफल हमारी ।
जब लौँ महि न सिँचाइ पाइ सुरसरि-बर-बारी ॥
कृपा-कोर सौँ अब कीजै कोउ सुगम प्रनाली ।
जातैँ सुरसरि आइ भरै धरनी-सुख-साली ॥ ५ ॥

सुनि बिनती गुनि दुखित दास संकर दिन-दानी ।
निज बिलंब मन मानि सकुच बोले मृदु बानी ॥
अहो गंग सुभ-अंग अहो सुख-सागर-संगिनि ।
करनि दुरित-भय-भंग तरल-उत्तंग-तरंगिनि ॥ ६ ॥

कीन्यौ अकथ अनूप उग्र तप भूप भगीरथ ।
तव आगम तैँ सुगम-करन-हित अगम परम पथ ॥
लहि बिधि सौँ बरदान मान हमहूँ सौँ पायौ ।
तव उतरन-आतंक पूरि त्रिभुवन थहरायौ ॥ ७ ॥

तुम मन मानि सनेह सील पहिचानि पुरानी ।
करि भूषित मम सीस भरी जग सुजस-कहानी ॥
हम तव सुख-प्रद परस पाइ इहिँ भाय लुभाने ।
रहे राखि निज संग सरस बहु बरस बिताने ॥ ८ ॥

भई भूप की अति अनूप अभिलाष न पूरी ।
जउ असाध्य स्रम साधि लही बिधि सौँ निधि रूरी ॥
अब तिहिँ निरखि अधीर पीर कसकति अति उर मैँ ।
तातैँ तुम जग जाइ सुजस पूरौ तिहुँ पुर मैँ ॥ ९ ॥

हरहु पाप के दाप ताप के पुंज नसावौ ।
 सुर-पुर उर मैँ महि-महिमा कौ चाव उचावौ ॥
 भए छार जरि सगर-कुमारनि कौँ निस्तारौ ।
 भूप भगीरथ-अति-अनूप-कीरति बिस्तारौ ॥१०॥

बिलग न मानौ नैँकु प्रमानौ गिरा हमारी ।
 बसिहौ नित मो सीस कबहुँ हैँहौ नहिँ न्यारी ॥
 नित तव धार अखंड जटा-मंडल तैँ कढ़िहै ।
 जिहिँ लहि परम प्रमोद गोद बसुधा की मढ़िहै ॥११॥

यह कहि कर गहि जटा सटा लौँ सूँति सटाई ।
 बिंदु सरोबर ओर छोरे ताकी लटकाई ॥
 तातैँ निकसि अपार धार परिपूरि सरोबर ।
 चली उबरि ढरि करि उदोत षट सोत धरा पर ॥१२॥

नलिनी नीत पुनीत पावनी ललित ह्लादिनी ।
 इन तीननि सौँ भई आनि प्राची-प्रसादिनी ॥
 सुभ सुचच्छु बलसंध सिंधु सीता सुपुनीता ।
 इनसौँ पच्छिम चली पढ़ति भूपति-गुन-गीता ॥१३॥

पै न भगीरथ-चित-चाहे पथ सौँ महि आई ।
 यह लखि बिलखि भुवाल रहे चिंता अधिकाई ॥
 आई सरोबर-तीर धीर धरि भरि दृग बारी ।
 हैँ आरत-आधीन दीन बिनती उच्चारौ ॥१४॥

जय ब्रह्मा-संपत्ति-सार जय जय ब्रह्मद्रव ।
 जय महेस-मन-हरनि दरनि दुख-दंद-उपद्रव ॥
 जय बृंदारक-बृंद-बंध जय हिमगिरि-नंदिनि ।
 जय जम-गन-मन-दंड-दान-अभिमान-निकंदिनि ॥१५॥

जदपि बक्र तउ सक्र-सदन की सरल निसेनी ।
 जउ नीचे कौं चलति उच्च पद तउ नित देनी ॥
 जदपि छुभित अतिकांति सांति-दायनि तउ मन की ।
 जउ उज्जल-जल-रूप तऊ रंजनि रुचि जन की ॥१६॥

देहु कृपा-अवलंब अंब त्र्यंबक-गुन धारौ ।
 भारत भूमि पवित्र करौ बैभव बिस्तारौ ॥
 सागर पूरि पताल पैठि तहँहूँ जस छावौ ।
 सगर-सुतनि कौं सोक सारि सुर-लोक पठावौ ॥१७॥

सुनि नृप-बिनय निदेस गंग गुनि मन महेस कौ ।
 सरित सातवीं होइ गह्वौ पथ पुन्य-देस कौ ॥
 भागीरथी-पुनीत-नाम-धारिनि दुख-हारिनि ।
 गारिनि जम-गन-दाप पाप-संताप-निवारिनि ॥१८॥

भूप भगीरथ भए दिव्य स्यंदन चढ़ि आगे ।
 लगी गंग तिन संग भाग भारत के जागे ॥
 सृंगनि सिखरनि तोरि फोरि ढाहति ढहरावति ।
 औघट घाट अघाट चली निज बाट बनावति ॥१९॥

प्रथम निकसि हिम-कलित कूल पर छबि छहराई ।
 पुनि चहुँ दिसि तैँ ढरकि ढार धारा है धाई ॥
 चंद्रकांत-चट्टान चंद्रिका परत सुहाई ।
 मनु पसीजि रस-भीजि सुधा-सरिता उपजाई ॥२०॥

तिहिँ प्रबाह मैँ मिलित ललित हिम-कन इमि दमकत ।
 सारद बारद माहिँ मनौ तारा-गन चमकत ॥
 कै बसुधा - सृंगार - हेत करतार सँवारी ।
 सुघर सेत सुख-सार तार-बाने की सारी ॥२१॥

कहुँ हिम ऊपर चलति कहुँ नीचैँ धँसि धावति ।
 कहुँ गालनि बिच पैठि रंध्र-जालनि मग आवति ॥
 सरद-घटा की बिज्जु-छटा मानौ लुरि लहरति ।
 ऊरध अध मधि माहिँ मचलि मंजुल छबि छहरति ॥२२॥

कहुँ अटूट बहु धार गिरतिँ हिमकूट-तुंड तैँ ।
 ऐरावत के सुंड मनहु लटकत भुसुंड तैँ ॥
 छटकि छीँट छबि छाड़ छत्र लौं छिति पर छहरै ।
 सुंड भरघौ जल मनहु फैलि फुफकारनि फहरै ॥२३॥

इमि हिम-खंड बिहाइ आइ पाहन-पथ मंडति ।
 ढरकि ढार इक-डार चली गिरि-खंडनि खंडति ॥
 फाँदति फैलति फटति सटति सिमिटति सुदंग सौँ ।
 सृंगनि बिच बिच बढ़ी गंग सरि भरि उमंग सौँ ॥२४॥

कहुँ ढाहे ढोकनि ढुकाइ निज गति अवरोधति ।
 पुनि ढकेलि ढुरकाइ तिन्हैं पकरथौ मग सोधति ॥
 कबहुँ चलति कतराइ बक्र नव बाट काटि गहि ।
 कबहुँ पूरि जल-पूर कूर ऊपर उमंडि बहि ॥२५॥

कहुँ बिस्तर थल पाइ बारि-बिस्तार बढ़ावति ।
 लघु गुरु बीचि पसारि छंद-प्रस्तार पढ़ावति ॥
 कै दिग-दंती-दंत-दिब्य-दीरघ-पाटी पर ।
 लिखति सतोगुन घोटि भूप-जस-रूप रुचिर बर ॥२६॥

पुनि कोउ घाटी बीच भीचि जल-बेग बढ़ावति ।
 ढुरकत ढोकनि खड़बड़ाइ धुनि-धूम मचावति ॥
 मनहु भूप कौ अति अनूप बर बिरद उचारति ।
 जम-गन कौ दरि दंभ खंभ ठोकति ललकारति ॥२७॥

हरहराति हर-हार सरिस घाटी सौँ निकरति ।
 भव-भय-भेक अनेक एक संगहि सब निगरति ॥
 अखिल हंस-बर-बंस घेरि साँकर घर धारे ।
 भरभराइ इक संग कढ़त मनु खुलत किवारे ॥२८॥

कहुँ कोउ गह्वर गुहा माहिँ घहरति घुसि घूमति ।
 प्रबल बेग सौँ धमकि धूँसि दसहुँ दिसि दूमति ॥
 कढ़ति फोरि इक ओर घोर धुनि प्रतिधुनि पूरति ।
 मानहु उड़ति सुरंग गूढ़ गिरि-सृंगनि चूरति ॥२९॥

सकल सुरासुर सिद्ध नाग गुह्यक गिरि-बासी ।
 इत उत हेरत हरबरात हिय भरे उदासी ॥
 छाड़ि जोग जप जज्ञ अज्ञ लौं चौंकि चकाए ।
 जहँ तहँ दौरत दुरत जुरत कर कान लगाए ॥३०॥

बिसद बितुंड दबाइ कुंडलित सुंड भुसुंडनि ।
 भय भरि नैन भ्रमाइ धाइ पैठत जल-कुंडनि ॥
 चीते तिँदुवे बाघ भभरि निज आघ भुलाए ।
 जित तित दौरत दाबि पुच्छ अरु कान उठाए ॥३१॥

हरिन चौकड़ी भूलि दरिनि दौरत कदराए ।
 तरफरात बहुसृंग सृंग भाड़िनि अरुभाए ॥
 गहत प्लवंग उत्तंग सृंग कूदत किलकारत ।
 उड़ि बिहंग बहु-रंग भयाकुल गगन गुहारत ॥३२॥

गुफा फारि फहराइ चलत फैलत बर बारी ।
 मानहु दुख-द्रुम-दलन-काज बिधि रचत कुठारी ॥
 सगर-सुतनि के दुरित-जूह पर कै मन-मरकी ।
 बृंत-व्यूह रचि चलति सुकृत-सेना नर बर की ॥३३॥

कै त्रिताप के हरन-हेत सुभ व्यजन सुहायौ ।
 बिरचत रुचिर बिरंचि बिसद हिम-पटल-मढ़ायौ ॥
 कै हीरक-मय मुकुट मंजु करि महि देवी कौ ।
 सब लोकनि मै करत मान ताकौ अति नीकौ ॥३४॥

इहिँ बिधि घाटिनि दरिनि कंदरिनि पैठति निकसति ।
 कहुँ सिमिटि घहराति कहुँ कल-धुनि-जुत बिकसति ॥
 कहुँ सरल कहुँ बक्र कहुँ चलि चारु चक्र-सम ।
 कहुँ सुढंग कहुँ करति भंग गिरि-सृंग सक्र-सम ॥३५॥

गंगोत्तरि तैँ उतरि तरल घाटी मैँ आई ।
 गिरि-सिर तैँ चलि चपल चंद्रिका मनु छिति छाई ॥
 बक-समूह इक संग गोति गिरि-तुंग-सिखर तैँ ।
 गए फैलि दुहुँ-बाहु बीच कै फाबि फहर तैँ ॥३६॥

तहाँ राजऋषि जहु परम हरि-भक्त प्रतापी ।
 द्वादस-अच्छर-महामंत्र के अबिकल-जापी ॥
 पूरि भूरि अनुराग जाग कोउ सुभ ठान्यौ हो ।
 सकल देव-मुनि-गोत न्यौति सानंद आन्यौ हो ॥३७॥

ताकौ वह मख-बाट बिसद वह ठाट सजायौ ।
 औचक गंग-तरंग आइ करि भंग बहायौ ॥
 भयौ जहु-उर कोप जज्ञ कौ लोप निहारत ।
 आमंत्रित द्विज-देव-सिद्ध-अपमान बिचारत ॥३८॥

सुमिरत हरि कौतुकिहिँ कछुक कौतुक उर आयौ ।
 उठि सम्हारि धृति धारि सबनि सादर सिर नायौ ॥
 हरि-माया की परम प्रबल महिमा मन धारी ।
 हरि हरि करि हरषाइ अंजली उमगि पसारी ॥३९॥

ताकैँ अंतर-ओक बसत गो-लोक-बिहारी ।
सक्ति-सहित सुख-धाम भक्ति-बस जन-दुख-हारी ॥
जाकौ बिछुरन-छेओ भअजैँ सुरसरि उर राखति ।
सफरिनि-मिसि धरि अमित नैन दरसन अभिलाषति ॥४०॥

यह अवसर सुभ सुलभ पाइ सो दुख-मेटन काँ ।
पैठि जह्नु-उर-अजिर सपदि प्रभु सौँ भेटन कौ ॥
अति मंगल मन मानि गंग आनंद सरसानी ।
निज बिस्तार समेटि अंजली आनि समानी ॥४१॥

कियौ जह्नु तिहिँ पान हरषि हरि-नाम उचारत ।
भावो भूत कुपूत पूत निज कुल के तारत ॥
सुर मुनि सब तिहिँ समय परम बिस्मय सौँ पागे ।
पर्वत-नृप-महिमा महान गुनि गावन लागे ॥४२॥

यह दुर्घट घट देखि भगीरथ निपट चकाए ।
सुठि स्यंदन तैँ उतरि तुरत आतुर तहँ आए ॥
माथ नाइ कर जोरि सकल सुर मुनि नृप बंदे ।
गदगद स्वर सति भाय जह्नु सादर अभिनंदे ॥४३॥

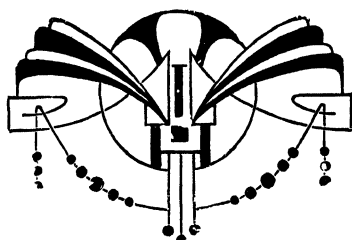
सगर-सुतनि की कही प्रथम अति करुन-कहानी ।
पुनि बिरंचि-हर-कृपा गंग जासौँ महि आनी ॥
कह्यौ भयौ अपराध घोर यह सब बिन जानैँ ।
अनजानत की चूक-हूक पर साधु न मानैँ ॥४४॥

छोभ-छलक अब छाड़ि छमा-छादित चित कीजै ।
 ब्रह्म रुद्र लौं है दयाल सुरसरि सुभ दीजै ॥
 नत निज-महिमा-संग गंग तुव जस जग छैहै ।
 धारि जाह्नवी नाम हरषि तुव सुता कहैहै ॥४५॥

दीन बचन सुनि भए सकल द्विज देव दुखारी ।
 जह्नु-जोग-बल बरनि भगीरथ बात सकारी ॥
 है प्रसन्न तब जह्नु कृपा-चितवनि सौं चाह्यौ ।
 अति असेस अवधेस-महाम्रम-सुकृत सराह्यौ ॥४६॥

सगर-सुतनि की दुसह दसा गुनि अति दुख मान्यौ ।
 सकल-जगत-हित माहिँ निजहिँ बाधक जिय जान्यौ ॥
 करुना-सिंधु-तरंग तुंग इमि उर मै बाढ़ी ।
 बन्यौ न राखत गंग पलटि काननि सौं काढ़ी ॥४७॥

बैसाख सुक्ल सुभ सप्तमी गंग-नाम-गौरव गह्यौ ।
 जब निकसि जह्नु के अंग सौं गंग जाह्नवी-पद लह्यौ ॥४८॥



नवम सर्ग

सादर सबहिँ .नवाइ सीस अवनीस भगीरथ ।
बढ़े बहुरि अगुवाइ धाइ चढ़ि बायु-बेग रथ ॥
चली गंगहू संग अंग ओजनि उमगाए ।
ज्यौँ कल-क्रीरति रहति सदा सुकृतिहिँ पछियाए ॥ १ ॥

पुन्य-पाथ परिपूरि करति पर्वत-पथ पावन ।
सब प्रतिबंध नसाइ आइ गिरि-कंध सुहावन ॥
कूदी धरि धुनि-धमक घोर ठाढ़ी खाढ़ी मैँ ।
परी गाज सी गाजि पुहुमि-पातक-पाढ़ी मैँ ॥ २ ॥

अति उछाह सौँ उछरि परी फहराति फलंगति ।
प्रबन-पाद सौँ दूरि भूरि-बल-पूरि उमंगति ॥
चढ़त चंद की चारु छटा ज्यौँ छिति छबि छावति ।
उच्च-धाम-अभिराम-पाँति पच्छिम-दिसि आवति ॥ ३ ॥

फलकि फेन उफनाइ आइ राजत जुरि जल पर ।
मनहु सुधा-निधि महत सुधा उमहत तरि तल पर ॥
फबति फुही की फाब धूम-धारा लौँ धावति ।
गिरि-कोरनि पर मोर-पंख-तोरन-छबि छावति ॥ ४ ॥

जिनके हाड़ पहाड़-खाड़-बिथुरित तिहिँ परसत ।
 सो लहि लहि बर बपुष जाइ सुरपुर सुख सरसत ॥
 जुरत न तिते बिमान जिते तारति इक संगहि ।
 निज प्रताप - बल पर पहुँचावति गंग-तरंगहि ॥ ५ ॥

बिपुल बेग सौँ जदपि गाजि गवनत जल तर कौँ ।
 तउ सफरिनि हित होत सुपथ उमहत ऊपर कौँ ॥
 निज अधीन पर ज्यौँ प्रवीन बिक्रम न जनावैँ ।
 बरु दै बाहँ उमाहि उच्च पद पर पहुँचावैँ ॥ ६ ॥

देव दनुज गंधर्व जच्छ किन्नर कर जोरे ।
 निज निज नारिनि संग अंग बहु भावनि बोरे ॥
 भय बिस्मय बिस्वास आस आनँद उर छाए ।
 दुहुँ कूलनि सुख-मूल स्वच्छ पर परे जमाए ॥ ७ ॥

अद्भुत अकथ अनूप गंग-कौतुक कल देखत ।
 अति अलभ्य यह लाभ ललकि लोचन कौ लेखत ॥
 स्वस्ति-पाठ कोउ पढ़त कोऊ अस्तुति गुनि गावत ।
 कोऊ भगीरथ भव्य भाग को राग कढ़ावत ॥ ८ ॥

कोउ भुकि भाँकन-चाय बाढ़ पर पाय जमावत ।
 पै भाई सौँ भुलमुलाइ पाछैँ हटि आवत ॥
 पुनि साहस करि सँभरि सकल खाढ़ी मैँ उतरत ।
 पग पग पर दृग दिए किए चित-बित अच्युत-रत ॥ ९ ॥

कोउ ढिठाइ नियराइ ठाइ पग भुकि जल परसत ।
 सुधा-स्वाद-सुख बाद बदत रसना रस सरसत ॥
 ताकी देखादेख सेष सब चाव उचावत ।
 हिचकिचात ललचात नीर नेरैँ चलि आवत ॥१०॥

सीँचि सीस आचम्य रम्य सुखमा सुभ देखत ।
 नंदनवन-आनंद-अमित-लेखा लघु लेखत ॥
 कोउ ठमकत गहि ठाम ठठोली करि कोउ ठेलत ।
 कोउ भाजत छल छाइ धाइ कोउ ताहि पछेलत ॥११॥

कोउ सीतल-जल-छीँट छपकि काहू पर छिरकत ।
 कोइ काहू कौँ पकरि पीठि-पाछैँ हटि हिरकत ॥
 कोउ अधार कछु धारि धँसत जानू लगि जल मैँ ।
 हरबराइ पर कढ़त थमत नहिँ पूर प्रबल मैँ ॥१२॥

कोउ कटि-तट पट बाँधि खेल अटपट अति ठावत ।
 इत तैँ उत जल-धार-ढार - नीचैँ हैँ धावत ॥
 यह कौतुक कल अपर सकल बिस्मित-चित चाहत ।
 साधु साधु कहि गहि जुहारि जुरि ताहि सराहत ॥१३॥

जहँ कोउ मंजुल मोड़ तोड़-गति तरल निवारत ।
 प्रबल-बेग जल फैलि सांति-सुखमा बिस्तारत ॥
 तहाँ जूह के जूह जुरत जल-केलि-उमाहे ।
 बहु विनोद आमोद करत आनँद अवगाहे ॥१४॥

कोउ नहात कोउ तिरत कोऊ जल-अंतर धावत ।
 रबिहिँ अर्घ कोउ देत कोऊ हर-हर-धुनि लावत ॥
 लै चुभकी कोउ भजत सीत-भय-भीत बिलोकत ।
 कोउ परिहास-बिलास-हेत ताकौँ गहि रोकत ॥१५॥

कोऊ अच्छरिनि छरत छेड़ि छँटि छौँट उछारत ।
 तिनकी उभकनि भुकनि भाँकि कहुँ अनत निहारत ॥
 कोउ कहुँ तरु-तर बैठि बिसद यह दृश्य निहारत ।
 मोद-आँस-मुक्तालि प्रकृति-देबी पर वारत ॥१६॥

सुमुखि-सुलोचनि-बृंद मंद मुसकात कलोलत ।
 दर-बिकसित अरबिंद मनौ बोचिनि-बिच डोलत ॥
 जगर-मगर तन-रतन-जोति जल-तल इमि चमकति ।
 तरनि-किरन ज्यैँ परत दिव्य दरपन पर दमकति ॥१७॥

नहाइ आइ पुनि तीर चीर सुंदर सब धारत ।
 करि षोड़स उपचार आरती उमगि उतारत ॥
 जहँ तहँ मंगल-रंग-संग साजे जुवती-गन ।
 नाचत गावत बिबिध बजावत बाद मगन-मन ॥१८॥

इहिँ बिधि सुरसरि सुर-समाज-सेवित सुख-सानी ।
 भरि बिनोद गिरि-गोद मोद-मंडित उमगानी ॥
 कढ़ति सिमिटि इक ओर घोर धुनि सौँ नभ पूरति ।
 ढौँकनि ढेला करति दुरत ढेलनि चकचूरति ॥१९॥

कहूँ तरल कहूँ मंद कहूँ मध्यम गति धारे ।
 दरति कूल-द्रुम-मूल ढहावति कठिन करारे ॥
 द्वै गिरि-स्नेहिनि बीच बढ़ति उमड़ति इमि आवति ।
 ज्यों बादर की जोन्ह बिसद बीथिनि मैँ धावति ॥२०॥

गिरि-बिहार इमि करति हरति दुख-दुरित-समूहनि ।
 देत निरासिनि आस त्रास जम-गन के जूहनि ॥
 कर्न-प्रयाग बिभूषि कर्न-गंगा सँग लावति ।
 उत्तर-कासी कौ महत्त्व लोकोत्तर ठावति ॥२१॥

भरि टिहरी-उत्संग संग भृगु-गंग समेटति ।
 देव-प्रयागहिँ पूरि अलक-नंदहिँ भरि भेटति ॥
 हृषीकेश सौँ होति सैल-बंधहिँ बिलगावति ।
 हरिद्वार मैँ आइ छेम छिति-मंडल छावति ॥२२॥

जेठ मास सित पच्छ स्वच्छ दसमी सुखदाई ।
 तिहिँ दिन गंग उमंग-भरी भूतल पर आई ॥
 दस-बिधि-पातक-हरन-हेत फहरान फरहरा ।
 तातैँ ताकौ परशौ नाम अभिराम दसहरा ॥२३॥

सुर-धुनि आवन-धूम धाम-धामनि मैँ धाई ।
 चहुँ दिसि तैँ चलि चपल जुरे बहु लोग लुगाई ॥
 चारहु बरन पुनीत नीति-नाधे गृह-बासी ।
 जोगी जंगम परमहंस तापस संन्यासी ॥२४॥

कोउ नहान कोउ दान करत कोउ ध्यान सुधारत ।
 कोउ स्रद्धा सौँ पितर स्राद्ध तरपन करि तारत ॥
 कोऊ बेद बेदांत मथत रस सांत उगाहत ।
 कोऊ चढ़्यौ चित-चाव भक्ति के भाव उमाहत ॥२५॥

कोउ निरूपि निर्बान पुलकि सानँद दृग फेरत ।
 कोउ अघाइ जल-स्वाद पाइ ताकौँ हँसि हेरत ॥
 कोउ अन्हात पछितात न पुनि जग-जनम बिचारत ।
 कोउ कुटीर-हित हुलसि तीर पर ठाम निहारत ॥२६॥

कबि कोबिद कोउ भव्य भाव उर-अंतर खाँचत ।
 निरखि उत्तंग तरंग रंग प्रतिभा कौ जाँचत ॥
 सुमिरि गिरा गननाथ गंग कौँ माथ नवावत ।
 रुचिर काव्य-कल-करन-काज चित चाव चढ़ावत ॥२७॥

उज्जल-अमल-अनूप-रूप-उपमा बहु सोधत ।
 मुकता-पानिप सरिस स्वच्छ कहि कछु मन बोधत ॥
 पै तिहिँ अचल बिचारि चित्त तासौँ बिचलावत ।
 पुनि बरनन कौँ बरन बरन आनन नहिँ आवत ॥२८॥

बिपुल बेग बल बिक्रम कौँ गुनि गिरि-तरु-गंजन ।
 तिनकी समता-हेत चेत चित परत प्रभंजन ॥
 पै तामैँ सुख-परस सरस कौ दरस न देखत ।
 प्रबल बाह मैँ बहीँ सकल उपमा तब लेखत ॥२९॥

सुचि सीतल जल परखि हरषि ही-तल उमगावत ।
हिम-पट-पटतर प्रगटि नैँकु निज जीव जुड़ावत ॥
पै तिहिँ गुनद न जानि हीन-उपमा उर आनत ।
आन सीत उपमान परे पाला तर मानत ॥३०॥

आधि-ब्याधि-दुख-दोष-दलन-गुन गुनि अभिलाषत ।
सकुचि सजीवन-मूरि-स्वरस समता-हित भाषत ॥
पै ताकैँ सुख-स्वाद माहिँ संसय मन पारत ।
तब गुन-गन-निरधार धनंतर कैँ सिर धारत ॥३१॥

मृदुल-माधुरी-मोद कहन-हित हिय हुलसावत ।
कबहुँ सुकृत-बस सुधा-स्वाद चाख्यौ चित आवत ॥
पै सोउ उपमा माहिँ नाहिँ पावत कहि तोलन ।
अकथ गंग-जल-स्वाद देत अधरहिँ नहिँ खेलन ॥३२॥

इमि गोचर-गुन गुनत उमगि उपमा निरधारत ।
समता असम बिचारि सकल सुरसरि पर वारत ॥
रसना रुचिर पखारि धारि प्रतिभा पर पानी ।
तारन-परम-प्रभाव चहत बरनन बर बानी ॥३३॥

चित चलाइ चढ़ि चाय लोक तीनहुँ परिसोधत ।
पै न कोऊ उपमान ध्यान मैँ आनि प्रबोधत ॥
तब सारद-पद-कंज-मंजु मधुकर-मन लावत ।
सुमति-स्वच्छ-मकरंद लहत दुख-दंद नसावत ॥३४॥

सुरसरि-सरि-हित बिसरि आन उपमान न आनत ।
 कहे सुने चित गुने सकल अनुचित सो जानत ॥
 सुमिरि गंग कहि गंग गंग-संगति अभिलाषत ।
 भाषि गंग-सम गंग रंग कबिता कौ राखत ॥३५॥

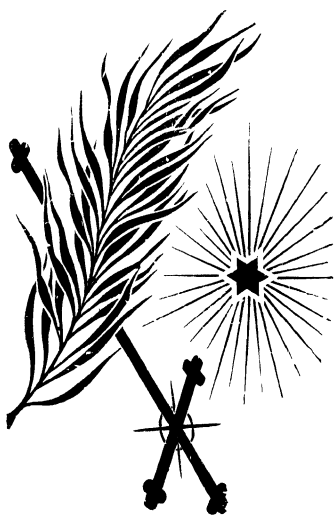
सुमुखि-बृंद सानंद सुघर तन रतन सजाए ।
 बिहरत बलित-बिनोद ललित लहरत जल भाए ॥
 तारनि-सहित अमंद-चंद-प्रतिबिंब मनोहर ।
 मनु बहु बपु धरि फबत फलक-जुत फटिक सिला पर ॥३६॥

गोरे गात सुहात स्वच्छ कलधौत छरी से ।
 तिन मैँ चल चख चमचमात सुंदर सफरी से ॥
 मनु जग-जीतन-काज साज सब सबल बनावत ।
 मीनकेतु निज-केतु-मीन सुभ जल बिचरावत ॥३७॥

तैरत बूड़त तिरत चलत चुभकी लै जल मैँ ।
 चमकति चपला मनहु सरद-घन-बिमल-पटल मैँ ॥
 तरल तरंगनि-बीच लसतिँ बहुरंगनि सारी ।
 मनहु सुधा-सरि-बाढ़ परी सुरपुर-फुलवारी ॥३८॥

अंग-संग जल-धार धँसत जिनके मुक्ता-गन ।
 सो करि धरि बर बपुष जाइ बिहरत नंदनबन ॥
 जिन मृग के मद परत छूटि घट-तट तेँ पानी ।
 तिनकी करत सचोप चंद-बाहन अगवानी ॥३९॥

इमि निकसि गंग गिरि-गेह तै ॐ गह्यौ पंथ महि-ओक कौ ।
करि हरिद्वार कौँ अति सुगम द्वार अगम हरि-लोक कौ ॥४०॥



दशम सर्ग

महि-बासिनि उर भरति भूरि आनंद-नद-नारे ।
दुख-दारिद-द्रुम दरति विदारति कलुष-करारे ॥
बसुधहि^८ देति सुहाग माँग मोतिनि सौँ पूरति ।
भरति गोद आमोद करति मन-मोहिनि मूरति ॥ १ ॥

कर्मज-कृषि पर अति प्रचंड पाला सौ पारति ।
चित्रगुप्त की लेख-रेख निस्सेष पखारति ॥
चली देवधुनि धाइ धरा-तल धूम मचावति ।
भूप-भगीरथ-सुभ्र-बेष-जस-रेख खचावति ॥ २ ॥

कबहुँ सघन बन पैठि परम स्वच्छंद कलोलति ।
कहुँ धावति कहुँ चलति चारु कहुँ डगमग डोलति ॥
कहुँ दै थपकि थपेड़ पैँड़ के पेँड़ ढहावति ।
कहुँ उत्तंग-तरंग-संग तट-बिटप बहावति ॥ ३ ॥

बन-देबिनि के वृंद करत आनंद-बधाए ।
बिबिध-पत्र-फल-फूल-मूल-उपहार सजाए ॥
नाग-कन्यका बहु प्रकार उपचार प्रचारै^८ ।
फनि-मनि के करि दीप आरती उमगि उतारै^८ ॥ ४ ॥

निर्जन बन लहि सकल हेलि जल-केलि उमाहैँ ।
 दुसह दुपहरी-दाह बिसरि सरि-सलिल सराहैँ ॥
 मनु बन-सुषमा सुखम बिषम ग्रीषम की जारी ।
 बिहरतिँ गंग-प्रसंग देह धरि दिव्य सुढारी ॥ ५ ॥

दीरघ-दाघ निदाघ माहिँ पानी कौँ तरसे ।
 सीतल धार अपार पाइ बनचर सुख सरसे ॥
 अति-अमंद-आनंद-मगन-मन उमगत डोलत ।
 सहज बैर बिसराइ आइ कल कूल कलोलत ॥ ६ ॥

लखत कनखियनि चखत नीर मृग बाघ परस्पर ।
 भाजत भ्रपटत बनत पै न तजि नीर सुखद बर ॥
 नाचत मुदित मयूर मंजु मद-चूर अघाए ।
 अहि जुड़ात तिन पास पाइ सुख त्रास भुलाए ॥ ७ ॥

कहुँ कीड़त करि-निकर तरंगनि मैँ सुख सरसत ।
 मनु कलिंद के सिखर-बृंद सित-घन-बिच दरसत ॥
 कहुँ कपि लटकत नीर अटकि तट-बिलुलित डारनि ।
 बालखिल्य मनु लहत सु तप-संचित-सुख-सारनि ॥ ८ ॥

कहुँ जल-बीचिनि बीच अड़े महिषाकर अरने ।
 जम-बाहन हूँ व्यर्थ परे मनु सुरधुनि-धरने ॥
 सिमिटि ससा कहुँ तीर नीर छकि अधर हलावत ।
 ससि-मंडलहिँ अखंड रखन की बिनय सुनावत ॥ ९ ॥

सुरधुनि-स्वागत-काज साज बन-राज सजायौ ।
 सहित सहाय समाज न्यौति ऋतु-राज पठायौ ॥
 ठाम ठाम अभिराम सुखद सुखमा सौँ पागे ।
 नंदन-बन-आनंद मंद लागत जिहिँ आगे ॥१०॥

बर बल्लिनि के कुंज-पुंज कुसमित कहूँ सोहैँ ।
 गुंजत मत्त मलिंद-बृंद तिन पर मन मोहैँ ॥
 मनौ सुहागिनि सजे अंग बहुरंग दुकूलनि ।
 गावति मंगल मोद-भरीँ छाजे सिर फूलनि ॥११॥

कहूँ तरुवर बहु भाँति पाँति के पाँति सुहाए ।
 नव-पल्लव-फल-फूल-भार सौँ डार भुकाए ॥
 मनहु धारि सुख-भरित हरित बाने बर माली ।
 अवसर अकथ अलेख लेखि साजीँ सुभ डाली ॥१२॥

कूजत विविध बिहंग-संग अति आनंद-साने ।
 मानहु मंगल-पाठ पढ़त द्विज-गन उमगाने ॥
 कहूँ बिरदावलि बदत कीर-चारन मन-चारी ।
 सावधान-धुनि धुनत कहूँ परभृत-प्रतिहारी ॥१३॥

नाचत मंजुल मोर भौँर साजत सारंगी ।
 करति कोकिला गान तान तानति बहुरंगी ॥
 स्यामा सीटी देति चटक चुटकी चुटकावत ।
 घूमि भूमि भुकि कल कपोत तबला गुटकावत ॥१४॥

इमि राँचति रस-रंग गंग बन बाहिर आवति ।
जलद-पटल बिलगाइ जोन्ह मनु छिति छबि छावति ॥
चलति चपल त्रय-ताप पाप-तम-दाप निवारति ।
कलित कृपा अभिराम सुभासुभ धाम पसारति ॥१५॥

कोउ पटपर पर कबहुँ पाट सोभा बिस्तारति
काटि कूल छिति छाँटि बाट निज सुघट सुधारति ॥
ऊसर के सर भरति निरस महि रस सरसावति ।
आस-पास के गाम सुभग सुख-धाम बनावति ॥१६॥

ग्राम-बधूटी जुरतिँ आनि तट गागरि लै-लै ।
गावतिँ परम पुनीत गीत धुनि लावतिँ जै-जै ॥
धारे सहज सिँगार गात गोरे गदकारे ।
बिहँसत गोल कपोल लोल लोचन कजरारे ॥१७॥

सुनकिरवा की आड़ ताड़ तरकी तरपीली ।
ठाढ़े गाढ़े कुचनि चिहुँटनी-माल सजीली ॥
रँगे चोल-रँग चीर लगे भोडर-नग चमकत ।
गृह-सम-संचित-स्वास्थ्य उमगि आनन पर दमकत ॥१८॥

कोउ पैठति जल हँसति घँसति एँड़ी कोउ तट पर ।
कोउ मुख पानि पखारि बारि छिरकति निज पट पर ॥
कोउ कर जोरि नवाइ सीस दृग मूँदि मनावति ।
ऐपन घुघुरी रोट अर्पि कोउ दीप दिखावति ॥१९॥

कहुँ मिलि जुलि दस पाँच नाच-रँग रुचिर रचावति ।
 हूढ़ौ दै इठलाइ भूमकि भुकि लंक लचावति ॥
 कोउ गोरुनि जल प्याइ न्हाइ परखति पनघट पर ।
 कोउ गागरि भरि चलति सीस धरि कोउ कटि-तट पर ॥२०॥

लखि मसान कहुँ गंग मान ताकौ छिति छापति ।
 तहँ मिलान सुभ सरल स्वर्ग-पथ कौ थिर थापति ॥
 हाड़ माँस तन-सार छार जिनके जल परसत ।
 सो सुभ गति अति लहत जाहि जोगी-जन तरसत ॥२१॥

तुरत गंग-गन धाइ मगन-मन जुरत जुहारत ।
 जम-दूतनि सौँ अटक भटक महि पटक पछारत ॥
 बरबस तिनहिँ छुड़ाइ बेगि बैठाइ बिमाननि ।
 पहुँचावत सुर-लोक सोक के लाँघि सिवाननि ॥२२॥

कोउ मगही सौँ मुरत कोऊ जमराज-सभा सौँ ।
 कोउ नरकनि कौ फारि द्वार परिपूरि प्रभा सौँ ॥
 चित्रगुप्त चितवत चरित्र यह चित्र भए से ।
 जकित जोहि जमराज काज निज बिसरि गए से ॥२३॥

कोउ पापिहिँ पंचत्व-प्राप्त सुनि जमगन धावत ।
 बनि बनि बावन-बीर बढ़त चौचंद मचावत ॥
 पै ताकी तकि लोथ त्रिपथगा के तट ल्यावत ।
 नौ-दूँ ग्यारह होत तीन-पाँचहिँ बिसरावत ॥२४॥

दंग होत सुर-राज गंग कौ रंग निहारत ।
भरति भीर के सुख सुपास कौ ब्यौत बिचारत ॥
नव-पुर-न्यौधन-हेत लेत बिधना सौँ पट्टा ।
सुचि रचना कौ करत बिस्वकर्मा सौँ सट्टा ॥२५॥

इहिँ बिधि तरल-तरंग गंग महिमा उदघाटति ।
बसुधा सुधा-निवास करति बिबुधालय पाटति ॥
ठाम ठाम बहु धर्म-धाम अभिराम बनावति ।
मुक्ति भुक्ति के अटल सदाव्रत-छेत्र चलावति ॥२६॥

ब्रह्मावर्ते पुनीत पुरी आई उमगाई ।
करि सनमान प्रदान ताहि महिमा अधिकारी ॥
गंग-परस तैँ पौन-गौन ह्वै सरस सुहावन ।
करत रम्य आराम सरिस चहुँ दिसि उपवन बन ॥२७॥

मुनि-गन-मन सुख भरत हरत आतप-तप-पापहिँ ।
लै लै तूँबा चलत धाइ सब तजि जग-जापहिँ ॥
न्हाइ पाइ जल-स्वाद ब्रह्म-चरचा बिस्तारत ।
नेति-नेति निबटाइ ठाइ इति-इति-धुनि धारत ॥२८॥

पुर-बासिनि की भीर तीर आवति उमगाई ।
बिस्मय - संक - बिनोद - मोद - श्रद्धा - सरसाई ॥
स्नान दान करि सकल पूजि सुरसरि सुख-साने ।
करत बैठि जल-पान लोक परलोक भुलाने ॥२९॥

भरि भरि गागरि चलति नवल नागरि सुख-दैनी ।
 ललकि लचावति लंक बंक चितवनि करि पैनी ॥
 धरि कमला बहु बपुष सुधा-निधि सौं मनु आई ।
 सुधा निदरि भरि गंग-बारि ऐँडति छबि-छाई ॥३०॥

चलि बिठौर सौं ठौर ठौर आनंद उपजावति ।
 दपटि दरेरति दुरित भूपटि दुरभाग भजावति ॥
 पहुँची आनि प्रयाग रम्य दुहुँ कूल बनावति ।
 भाऊ-भाड़िनि माहिँ मुक्ति-मुक्ताफल लावति ॥३१॥

तहँ बिरजा गोलोक-कुंज की सखी सयानी ।
 ह्वै जमुना उमगाइ आई भेँटी सुखसानी ॥
 हरि-हर-प्रिया-पुनीत-सुभग-संगम जगबंदित ।
 बिधि-पतनीहुँ गुप्त मिली ह्वै द्रवित अनंदित ॥३२॥

सोभा अकथ अनूप लखत सुर चढ़े बिमाननि ।
 गावत सारद-नारदादि अस्तुति तनि ताननि ॥
 एक पार्श्व सौं बढ़ति गंग उत्तंग तरंगति ।
 इक तैँ जमुना आनि मिलति सुख-संग उमंगति ॥३३॥

मनहु सितासित चमर दुरत दुहुँ दिसि तैँ आवत ।
 तीर्थराज पर हिलत मिलत सुखमा सरसावत ॥
 उभय कछारनि बीच बिसद अच्छयबट राजै ।
 मरकत मनि कौ अटल छत्र मानौ छबि छाजै ॥३४॥

चहुँ दिसि संख-मृदंग-भाँझ-भेरी-धुनि छाई ।
मनहु मंजु राज्याभिषेक की बजति बधाई ॥
जय जय हर हर तुमुल मन्द नभ-मंडल पूरत ।
जिहिँ सुनि दुरित दुरूह दौरि दुरि दूरि बिसूरत ॥३५॥

देउ धारा टकराइ उछरि मुरि पुनि जुरि धावति ।
सेत-नील-घन-पाँति लरति नभ मैँ ज्यैँ भावति ॥
हलरति लहर दुरंग संग मिलि-जुलि मनभाई ।
तरु-तर ज्यैँ चल-पत्र-बीच है परति जुन्हाई ॥३६॥

सुकृति-वृंद सानंद जुरत जोहत संगम पर ।
तिनकेँ पुन्य-प्रभाव हँसत जोगी जंगम पर ॥
कोउ अन्हात गहि तीर कोऊ मंचनि पर चढ़ि-चढ़ि ।
कोउ तरनी तैँ उतरि मंझ-धारा मैँ बढ़ि-बढ़ि ॥३७॥

आर-पार की माल कोऊ चढ़ि चाव चढ़ावत ।
कोउ थाननि के थान तानि पियरी पहिरावत ॥
कोऊ भरे चित भाव नाव चढ़ि खेलत नावर ।
कोउ पट भूषन देत कोऊ बाँटत न्यौछावर ॥३८॥

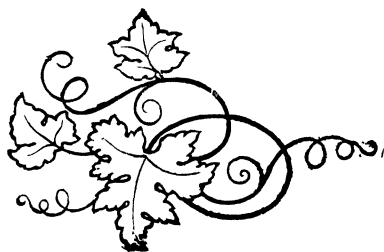
सुघर-सलोनी-जुवति-जूह गृह-काज बिसारे ।
गंग-परस पर सरस काम-कीड़ा-सुख वारे ॥
बिबिध-बिभूषन-बसन-बलित बिहरत कहुँ तट पर ।
दुहरी दीपति करति देह-दीपति परि पट पर ॥३९॥

कोउ अन्हति सकुचाति गात पट-ओट दुराए ।
 कोउ जल-बाहिर कढ़ति सु-उर-ऊरुनि कर लाए ॥
 कोउ ऐंड़ति इतराति उच्च-कुच-कोर उचावति ।
 लचकावति कोउ लंक बंक भृकुटी मचकावति ॥४०॥

मृग-मद चंदन-बंदनादि कोउ चायनि चरचति ।
 दधि अच्छत तंबूल फूल फल कोउ लै अरचति ॥
 चित्रित होति बिचित्र भाँति जल-पाँति सुहाई ।
 महि-बेनी पर मनहु चारु-चूनरि-छबि छाई ॥४१॥

जीवन-मुक्त बिरक्त कहूँ बिचरत सुख-साने ।
 मुनि-मंडल कहूँ कहत सुनत इतिहास पुराने ॥
 कहूँ द्विज-गन सुर साधि बाँधि लय बेद उचारत ।
 कहूँ कबि-जन स्वच्छंद छंद-बंधहिँ बिस्तारत ॥४२॥

इमि सब-तीरथ-मय देवधुनि धरि प्रयाग-गौरव गह्यौ ।
 मनु रुचिर राज्य-अभिषेक-हित सब-तीरथ-मुचि-जल लह्यौ ॥४३॥



एकादश सर्ग

गंग जमुन लै असि दुधार है चली चमंकति ।
काटति पातक-ब्यूह बिकट जम-जूह धमंकति ॥
बिंध्य-छेत्र सौं होति करति चरनाद्रिहिँ नंदित ।
बिंध्य-हिमाचल-मध्य-देस सुर-नर-मुनि-बंदित ॥ १ ॥

अति उछाह सौं चाह-भरी आनँद-सरसाई ।
उमगति तरल-तरंग-संग कासी नयरआई ॥
मिली तहाँ अगवानि मानि असि जाति-मितआई ।
चली बतावति बाट जतावति निखिल निकाई ॥ २ ॥

संभु-पुरी-सुखमा अपार सुरधार निहारत ।
ताकी महिमा कौ महान महि मान बिचारत ॥
चली मंद गति धारि धाम अभिरामहिँ देखति ।
लघु बीचनि करि गुन-अपार-लेखा उर लेखति ॥ ३ ॥

सीँचि स्वाति जल मुक्ति-खेत-बल बिपुल बढ़ावति ।
भव-भय-भंजनि संभु-सक्ति पर पानि चढ़ावति ॥
महा मसानहिँ परम-बाट कौ घाट बनावति ।
चिर-इच्छत-फल-लाहु मुमुच्छुनि तुच्छ जनावति ॥ ४ ॥

मनिकनिका लौं आइ निरखि सुखमा सुख-सानी ।
 धँसी धाड़ तिहिँ कुंड मुंडमाली-मनमानी ॥
 स्वाति-घटा सुभ भव-निधि अच्छय सीप समार्ई ।
 मुक्ति-पाँति धरि देह लगी बिथुरन मन-भाई ॥ ५ ॥

भूप भगीरथ उतरि तुरत रथ सौं सुख लीन्यौ ।
 संध्यादिक करि चंदचूर कौ बंदन कीन्यौ ॥
 सुखमा निरखि अनूप जानि सिव-रूप निवासी ।
 सबनि नवायौ सीस विविध बर बिनय बिकासी ॥ ६ ॥

पुनि सोच्यौ सकुचाइ कहैँ किहिँ भाय कढ़न कौं ।
 परम बंध स्वच्छंद गंग सौं बिनइ बढ़न कौं ॥
 पर पातक पर समुझि सहज अमरष मन ताकैँ ।
 भयौ बहुरि संतोष सपदि मन महि-भर्ता कैँ ॥ ७ ॥

जोरि पानि तब माँगि बिदा सुभ सिवसंकर सौं ।
 करि प्रनाम अभिराम धाम कासिहुँ आदर सौं ॥
 सगर-सुतनि कं साप-ताप कौ दाप बखान्यौ ।
 सुनत गंग स-उमंग चेति चलिबौ चित आन्यौ ॥ ८ ॥

कढ़ी भरत आतंक अंक दै मनिकनिका कौं ।
 सिवहिँ बिलोकति बंक करति गत-संक सिवा कौं ॥
 चली करति हुंकार धार-बिस्तार बढ़ावति ।
 महि-महिमा की भरति गोद मन मोद मढ़ावति ॥ ९ ॥

भूपहु सपदि सन्हारि भए स्यंदन चढ़ि आगे ।
जय-जय-धुनि नभ पूरि सुमन सुर बरसन लागे ॥
पुरवासिनि की भरी भीर सुभ तीर सुहाई ।
भय - बिस्मय - सुबिनोद - मोद - छद्दा - सरसाई ॥१०॥

कोउ दूरहि तैँ दबकि भूरि जल-पूर निहारत ।
कोउ गहि बाहिँ उमाहि बढत-बालक कौँ बारत ॥
कोउ कहँ ठठकि अवाइ लखत बिन पलक गिराए ।
गंग-दरस तैँ मनहु अंग देवनि के पाए ॥११॥

ग्रीवा चरन उचाइ चाय सौँ कोउ चल चाहत ।
सुभ-सुखमा-सुख-लहन-काज औरनि आवाहत ॥
जानु-पानि-जुग जोरि कोऊ जय-जय-धुनि लावत ।
कहत सुनत गुन गुनत कोऊ पुलकत पुलकावत ॥१२॥

काँउ हर-हर करि कर पसारि जल-तल हलकारत ।
दोउ हाथनि मनु अति अमंद आनंद बटोरत ॥
लै चुभकी है मगन मोद बारिधि को थाहत ।
जीवन-मुक्ति-महान-लाहु लहि उमगि उमाहत ॥१३॥

कोउ अंजलि जल पूरि सूर-सनमुख है अरपत ।
कोउ देवनि कौँ देत अर्घ पितरनि कोउ तरपत ॥
कोउ तट डटि पट सुघट साजि संख्या सुभ साधत ।
जप-माला मन लाइ इष्ट-देवहिँ आराधत ॥१४॥

जहँ तहँ करत कलोल लोल-लोचनि-ललना-गन ।
 सुंदर सुधर सुजान रूप-गुन-मान-मुदित-मन ॥
 कोउ ऐँठति तन तोरि छोरि अँगिया कोउ बैठति ।
 कोऊ उमैठति भौँह सौँह करि कोउ जल पैठति ॥१५॥

कोउ काहू कौ पकरि पानि डगमग पग धारति ।
 कोउ चंचल करि चखनि बिचल अंचलहिँ संहारति ॥
 कोउ निबटति कटि-तट समेटि चटपट गुभरौटा ।
 हँसति धँसति जलधार कसति कोउ कलित कछौटा ॥१६॥

सीस सजल कर क्वाइ छपकि काँउ छौँट उछारति ।
 सुर-तरु-डारनि मथति सुधा सुख-सार निसारति ॥
 कर-पिचकी जल-केलि करति कोउ आनंद धारे ।
 अरबिंदनि तैँ चलत मनहु मकरंद-फुहारे ॥१७॥

भूषन-जरित-जराय-कलित पैरति कोउ जल पर ।
 मनहु रतन उतरात छीर-सागर-बर-तल पर ॥
 न्हाइ न्हाइ तट आइ सकल सुंदर छबि छाजैँ ।
 मुकुर-धाम मनु काम-बाम-प्रतिबिंब बिराजैँ ॥१८॥

कोउ ऊरुनि बिच दाबि बसन गीले गहि गारति ।
 उसरत पट कटि उरसि संक-जुत बंक निहारति ॥
 कोउ लंकहि लचकाइ लचकि कच-भार निचोरति ।
 मर्कत-बल्लिनि मीड़ि मंजु मुकता-फल भोरति ॥१९॥

लै कर चंदन-बंदनादि कोउ सादर डारति ।
मनु पराग अनुराग-सहित कंजनि सौँ डारति ॥
कोउ अंजलि भरि सुमन सु-मन भरि भाव चढ़ावति ।
सुमन-सुमन-मन महि-उपजन कौ चाव चढ़ावति ॥२०॥

कोउ डारति सिर छ्वाइ छीर लीन्है करवा कर ।
सुर-धारा पर सुधा-धार मनु स्रवत सुधाधर ॥
सजि बातिनि की पाँति उमगि कोउ करति आरती ।
बिधि-सरबस पर वारति मनि-गन मनहु भारती ॥२१॥

असन बसन बहु भाँति भेटि कोउ सानँद राजति ।
मनहु परम-पथ-काज साज सुख के सब साजति ॥
कोउ भुकि करति प्रनाम टेकि महि माथ मयंकहिँ ।
मेटति मनहु बिसाल भाल के कठिन कु-अंकहिँ ॥२२॥

माँगति अचल सुहाग मंजु अंजलि कोउ धारे ।
कलप-लता मनु चहति परम-फल पानि पसारे ॥
इहिँ बिधि बिबिध बिधान ठानि बिधिवत सब पूजतिँ ।
मंगल-गीत पुनीत प्रीति-संजुत कल कूजतिँ ॥२३॥

संन्यासिनि के झुंड लिए कर दंड कमंडल ।
न्हाइ न्हाइ कहूँ तीर करत हर-हर करि मंडल ॥
मनहु जानि महि-अजिर महा मंगल कौ दंगल ।
सुंदर संग बनाइ आइ राजत तहँ मंगल ॥२४॥

कहुँ बटु-गन मन-मुदित मज्जि बर बेद उचारैँ ।
 बिबिध बिनोद प्रमोद करत भरि नीर सिधारैँ ॥
 मथित-पयोनिधि-स्वच्छ-सुधा भरि हिय हरषाए ।
 मानहु देव-कुमार चलत चित चाय उचाए ॥२५॥

बहु रंगनि की चलतिँ धारि सुभ अंगनि सारी ।
 मनहु कलित कसमीर-तीर तैरति फुलवारी ॥
 लिए सकल जल-पात्र पसारति रूप-उज्यारी ।
 निखिल-लोक-ससि मनहु सुधा भरि चलत सुखारी ॥२६॥

तट-बासिनि मन गंग मोद मंगल इमि छावति ।
 बढी बढावति बेग नेग मैँ मुक्ति लुटावति ॥
 पावन तरल तरंग देखि अति आनंद-पागी ।
 बरनत बिरद उतंग संग बरुना बर लागी ॥२७॥

बिस्वामित्र - पवित्र - धाम आई उमगाई ।
 सरजू परम पुनीत प्रीति-जुत भेँटन आई ॥
 नृप-कुल-गुरु की मानि मंजु कल कीरति-कन्या ।
 लै उछंग तिहिँ गंग चली हलरावति धन्या ॥२८॥

दच्छिन दिसि तैँ आनि भाग-अनुराग-लपेटी ।
 मगधदेस-मग धाइ सोन-धारा सुभ भेँटी ॥
 मिलि हिमगिरि-बर-बिंध्य-बिसद-महिमा मनभाई ।
 प्रगट्यौ हरि-हर-पुन्य-क्षेत्र सुर-मुनि-सुखदाई ॥२९॥

बढ़ी बहुरि सुरधार धरा-दुख-दारिद मेटति ।
कोसी आदि अनेक नदिनि निज संग समेटति ॥
अंग बंग के दुरित भंग करि रंग रचावति ।
जंगल जंगल माहिँ महा मुद मंगल छावति ॥३०॥

सुंदरबन मैँ भरति भूरि सुठि सुंदरताई ।
सगर-सुतनि हित मानि आनि सागर समुहाई ॥
जानि भगीरथ-वंस भूरि-जस-भाजन भारी ।
सहस-धार है चली भरन तिहिँ उमग-उभारी ॥३१॥

सागर - तरल - तरंग - गंग - संगम देखन कैँ ।
तारन - प्रबल - प्रभाव - भाव उर अवरेखन कैँ ॥
भूप - भगीरथ- अमित - सुजस - लेखा लेखन कैँ ।
सगर-सुतनि की साप-अधि-रेखा रेखन कैँ ॥३२॥

दमकावत दुति दिव्य भव्य भूषन चमकावत ।
गमकावत सुर-सुमन बिसद बाहन हमकावत ॥
जुरे उमगि सुख मानि आनि त्रिभुवन के बासी ।
भरी नीर-निधि-तीर भीर नृप-पुन्य-प्रभा सी ॥३३॥

कहुँ बिधि बिबुधनि संग बेद-धुनि मधुर उचारत ।
रचि तांडव त्रिपुरारि कहुँ डमरू डमकारत ॥
कहुँ हरि हरन-कलेस बट्यौ स्रम गुनि गुन गावत ।
कहुँ सुर-राज स्वराज बढ़त लखि मोद मचावत ॥३४॥

जहँ तहँ बिद्याधर बिचित्र कौतुक बिस्तारत ।
 सिद्धि बगारत सिद्ध सुजस चारन उच्चारत ॥
 गावत गुन गंधर्व नचत किन्नर दै तारी ।
 उमगि भरत कल कच्छ यच्छ सुख संपति भारी ॥३५॥

इक दिसि चढ़े बिमान भानु-कुल-भव्य-पितर-गन ।
 सिवि दधीचि हरिचंद आदि आनंद-मगन-मन ॥
 निज सपूत की अति अभूत करतूति निहारत ।
 साधु-बाद दै उमगि आँस-मुकता बर वारत ॥३६॥

कहुँ मुनि-गन मन-मगन लगन सुरसरि की लाए ।
 चहुँ दिसि चितवत चाह भरे भाजन खनियाए ॥
 नाग-कन्यकनि-संग कहुँ बिचरत बढ़ि तट पर ।
 सेस बासुकी आदि कान दीने आहट पर ॥३७॥

बाहन बिबिध बिधान जुरे तहँ आनि सुहाए ।
 सगर-सुतनि के काज सकल सुख-साज-सजाए ॥
 कहुँ जाननि की सजी सुखद सुभ सुंदर खेनी ।
 सागर-तट तै मनु सुरपुर लगि लगी निसेनी ॥३८॥

कहुँ हंसनि के बिसद बंस काटत कल कावा ।
 कहुँ गरुड़-गन करत धरा-अंबर-बिच धावा ॥
 बलिबरदनि के बृंद कहुँ बिचरत तट घूमत ।
 कहुँ ऐरावत-भुंड सुंड फेरत भुकि भूमत ॥३९॥

इक दिसि सजे सिँगार लसतिँ सुर-सदा-सुहागिनि ।
सगर-सुतनि बरि बेगि होन-हित अति बड़-भागिनि ॥
बिचरत कौतुक-निरत देव-ऋषि बिरति बिसारे ।
गंग-सुजस-रस-लीन बीन काँधे पर धारे ॥४०॥

इहिँ बिधि ठाटे ठाट बाट सब सानँद हेरत ।
ग्रीवा चरन उचाइ चपल चहुँघाँ चख फेरत ॥
हर-हर सब्द पुनीत उठ्यौ तब लौँ बेला तैँ ।
इति जय-जय-धुनि धाइ भरी नभ लौँ मेला तैँ ॥४१॥

उमगत अमित-तरंग-तुंग-बर-बाँह पसारें ।
फेन - फूल - सिँगार - हार - उपहार सुधारे ॥
बढ़्यौ बेगि बारीस सुखद सुरसरि भेटन कौँ ।
सुधा-हीन है भयौ छीन सो दुख-मेटन कौँ ॥४२॥

सहस-धार सुरधार मिली तिहिँ अति आदर सौँ ।
बिज्जु-छटा मनु छहरि लहरि बिहरी बादर सौँ ॥
किधौँ नील-सत-सिखर परी ढरि बिखरि जुन्हाई ।
कै मरकत कैँ छत्र सेत चामर-छबि छाई ॥४३॥

मीन मकर सिसुमार उरग आदिक उतराने ।
लहत गंग - सुभ - परस - पान परमानँद-साने ॥
पाप-साप-बस बिबस परे तिनके जे तन मैँ ।
ते धरि धरि बर बपुष बेगि बिहरत सुर-गन मैँ ॥४४॥

उतरि उतरि सुर-वृंद सकल सानंद कलोलत ।
 डामाडोल हिँडोल सरिस लहरनि लागि डोलत ॥
 बहु बिधि रचत बिनोद मोद चहुँ-कोद परस्पर ।
 ठमकत ठेलत डटत हटत हटकत भटकत कर ॥४५॥

पग जमाइ भुकि भुपट कोऊ लहरनि की भेलत ।
 कोउ घूँटुनि महि टेकि अटल औरनि अवहेलत ॥
 कोउ भाजत भय-भभरि ताकि उत्तंग तरंगनि ।
 कोउ साहस करि बढ़त पढ़त अस्तुति बहु रंगनि ॥४६॥

इहि बिधि सकल अन्हाइ पाइ सुख सुकृत कमाए ।
 पूजि सहित सनमान गान निज जाननि आए ॥
 सजि सजि भूषन बसन लगे चितवन चित दीन्हे ।
 तारन - कौतुक - लखन - लालसा लोचन लीन्हे ॥४७॥

इमि गंगासागर धाम सुभ जगत-उजागर जस लखौ ।
 जउ सागर-रूप अनूप तउ भव-सागर-बोहित भयौ ॥४८॥



द्वादश सर्ग

कौतुक निरखि अनूप भूपहू निपट अनंदे ।
पितरनि कियौ प्रनाम देव-वृंदनि पद बंदे ॥
पुनि सुर-धुनि-मन पाइ नाइ सिर जान बढ़ायौ ।
पितरनि परम प्रसन्न जानि मन मोद मढ़ायौ ॥ १ ॥

इत सुरसरि भरि सिंधु उभरि उर ओज बढ़ाए ।
सगर-सुतनि के साप-दाप पर चाप चढ़ाए ॥
चली चपल अति सुमन-वृंद-मन आनंद पूरति ।
फिरि-फिरि-लखत-ससंक-भूप-चिंता चकचूरति ॥ २ ॥

कपिल-धाम उत धाइ धूम सुरधुनि की धमकी ।
सुभ-आगम की ओप उमगि दसहूँ दिसि दमकी ॥
सगर-सुतनि-की-छार-छई छिति भूरि भयावनि ।
लगी लगन है मोद-मगन अति सुभग सुहावनि ॥ ३ ॥

सगर-कुमारनि-संग जरे जे तरु-बल्ली-बन ।
लगे बहुरि हरियान मनहु पाए नव जीवन ॥
सरस्यौ सुखद समीर कपिल पल पुलकि उधारे ।
निरखि धाम अभिराम ताप जारन के टारे ॥ ४ ॥

तब लौँ सुरसरि अति अपार आवर्त बनाए ।
 महा गर्त मैँ धँसी धाइ धुनि-धूम मचाए ॥
 कपिलदेव-अति-कठिन-साप-बल-विजय विचारति ।
 चक्रव्यूह रचि चली मनौ ललकति ललकारति ॥ ५ ॥

अभिनंदत-सुर-वृंद-सहित सानंद उमाही ।
 कपिल-धाम-ढिग आइ धाइ चहुँ ओर उमाही ॥
 दुख - दुर्मति - दुर्भाग्य - दुरित-रेखा हठि मेटीँ ।
 साठ-सहस सब छार-रासि निज अंक समेटीँ ॥ ६ ॥

परसत गंग-तरंग रंग अदभुत तहँ माच्यौ ।
 कौतुक निरखि महान मोद सुर-गन-मन राँच्यौ ॥
 लगे ललकि सब लखन चखनि अध ऊरध फेरन ।
 अदभुत-रस-स्वामिहु सराहि विस्मित-चित-हेरन ॥ ७ ॥

कढ़ि कढ़ि सगर-कुमार छार-रासिनि सौँ बढ़ि बढ़ि ।
 मढ़ि मढ़ि दमकति दिव्य देह चित-चायनि चढ़ि चढ़ि ॥
 चमकत तमकत चले चपल मंडत नभ-मंडल ।
 गंगागम मैँ मची मनहु पावक-कीड़ा कल ॥ ८ ॥

इक दिसि बिसद बिमान हौड़ करि दौड़ लगावत ।
 केतनि लै लै चलत हलत सोभा सरसावत ॥
 मनहु विविध-बर बरन साँझ-जलधर धर धावत ।
 गंग-सुजस-रस पूरि भूरि छबि सौँ नभ छावत ॥ ९ ॥

हंस-स इक ओर पिलत निज अंस भुकाए ।
केतनि पीठि चढ़ाइ चलत चहकत चटकाए ॥
करि अधिकार अखंड मंडि महि-मंडल मानौ ।
ब्रह्म-लोक-दिसि भूप-सुकृत-दल करत पयानौ ॥१०॥

कहुँ केतनि लै ललकि गरुड़-गन मगन उमंडत ।
उड़त जुड़त मँडरात मंजु नभ - मंडल मंडत ॥
अस्वमेध-फल न्हाइ गंग धरि अंग सुहाए ।
जात मनौ हरि-नगर सगर भेंटन उमगाए ॥११॥

धोरें धरम-धुरीन पीन पीठिनि लै कंते ।
बढ़त बाँधि सुभ ठाट बाट हर-गिरि की चेते ॥
निज गुन-सागर-सार भार मुक्तनि के नीके ।
मनहु गंग उपहार भौन भेजति भगिनी के ॥१२॥

उन्नत-विसद-बितुंड-भुंड सुंडनि फटकारत ।
केतनि लहि सुख पाइ धाइ सुर-सदन सिधारत ॥
अखिल-लोक सुर-राज इंद्र मनु न्यौति पठाए ।
गंगोत्सव लखि लौटि चलत गज-व्यूह बढ़ाए ॥१३॥

उचकावति कुच पीन खीन लंकहिँ लचकावति ।
अधर दबाइ हलाइ ग्रीव अंगनि मचकावति ॥
सस्मित भृकुटि-बिलास करति करि त्रिकुटि तनेनी ।
गावति मंगल चली संग सुर-सुंदरि-खेनी ॥१४॥

भूमि भूमि भुकि लचत नचत किन्नर अनुरागे ।
 भानु-बंस-जस-गान करत चारन सँग लागे ॥
 हरषत बरषत सुमन सुमन बढि बाट बतावत ।
 बादर धरि धुनि मधुर छत्र सादर सिर छावत ॥१५॥

बाजे विविध विधान व्योम बाजे सुभ साजे ।
 गाजे पुन्य-समूह जूह पातक के भाजे ॥
 पूरत परम प्रमोद चली चहुँ-कोद बधाई ।
 जय-जय की धुनि-धूम धाम-धामनि मै धाई ॥१६॥

भूप - भगीरथ - अति - उदार - अति - अदभुत - करनी ।
 तारनि - तरल - तरंग - गंग - महिमा मन हरनी ॥
 सुर किन्नर गंधर्व सर्व लखि आनंद पागे ।
 पुलकि अंग स-उमंग गंग-गुन गावन लागे ॥१७॥

करि अस्तुति बहु भाँति सकल मिलि माथ नवायौ ।
 छोभ-समन सुभ साम-गान धरि ध्यान सुनायौ ॥
 स्वस्ति-पाठ पढ़ि चढ़्यौ गंग-चित-रोष निवार्यौ ।
 हर्यौ अमित उद्वेग सांति सुख जग संचार्यौ ॥१८॥

न्हाइ-न्हाइ चढ़ि चाय पूजि स्रद्धा सरसाए ।
 नंदनादि - बन - सुमन - हार - उपहार चढ़ाए ॥
 कपिलदेव सौं मिलि जुहारि स्रद्धा-सरसाए ।
 तोष जनित आमोद-ओष आनन पर छाए ॥१९॥

निज-निज-देव-समूह-संग जुनि जूह सँवारे ।
 बिधि हरि हर हरषाइ हुलसि नृप-निकट पधारे ॥
 पुलकित-सुभग-सरीर नीर नैननि अबगाहे ।
 इक सुर सौँ सब भूप-सुकृत-स्रम-सुजस सराहे ॥२०॥

अभिनंदत सुर-बृंद देखि भूपति सकुचाने ।
 धाइ पाय लपटाइ ललकि आनंद सरसाने ॥
 बहुरि जुगल कर जोरि कंरि अस्तुति मन ठानी ।
 पै भावनि की भीर चीरि निकसी नहिँ बानी ॥२१॥

साबर-मंत्र समान अमिल आखर कछु आए ।
 जिहिँ प्रभाव सौँ भूप-भाव सबकैँ मन छापे ॥
 बढ़ि कृतज्ञता उमड़ि द्रवित है अजगुत कीन्यौ ।
 रसना कौ कल काम सरस नैननि सौँ लीन्यौ ॥२२॥

भए देवहू मगन भूप की भक्ति निहारत ।
 सके न कहि कछु उमहिँ मनहिँ मन रहे बिचारत ॥
 तब बिरंचि अगुवाइ उमगि बर बचन उचारे ।
 प्रेम-पुलकि अवनीस-सीस कंपित कर धारे ॥२३॥

धन्य भानु-कुल-भानु धन्य तप-तेज-तपाकर ।
 जासौँ लहत प्रकास सुकृत-सुख-सुजस-सुधाकर ॥
 मात-पिता-दोउ-बंस उजागर तुम अति कीने ।
 महि-बासिनि के सकल दोष-दुख-तम दरि दीने ॥२४॥

अंसुमान की कठिन आन करि कानि उतारी ।
 कर्म-बीरता-सुभग-सीख त्रिभुवन संचारी ॥
 मुरे न लखि घन-बिघन ठान ठानी सो ठानी ।
 किए सुरासुर दंग गंग अवनी पर आनी ॥२५॥

मृत्यु-लोक मैँ धर्यौ आनि सुभ स्रोत अमी कौ ।
 दै महिमा महि कियौ सारथक नाम मही कौ ॥
 यह अति दुस्तर काज आज लौँ अपर न साध्यौ ।
 जद्यपि सहि बहु कष्ट इष्ट-देवनि आराध्यौ ॥२६॥

साठ सहस नृप-सगर-पूत करि पूत उधारे ।
 पुन्य सलिल सौँ कपिल-साप के ताप निवारे ॥
 जब लौँ सुरधुनि-धवल-धार सागर मैँ धसिहैँ ।
 तब लौँ ते गत-सोक दिव्य लोकनि मैँ बसिहैँ ॥२७॥

सगर हियैँ कौ पुत्र-बिरह-उद्वेग थिरायौ ।
 सुरपुरहूँ मैँ देत ताप संताप सिरायौ ॥
 कपिलदेवहूँ लख्यौ तोष लखि सुरसरि-करनी ।
 निज आस्रम की बड़ी मानि महिमा मल-हरनी ॥२८॥

तव पितरनि-हित लागि गंगहूँ अति हुलसाई ।
 बर मुकतिनि की रासि निछावरि माहिँ लुटाई ॥
 थल थल थापे पुन्य-क्षेत्र चारहु-फल-दाई ।
 दसौँ दिगंगनि तव कीरति-सारी पहिराई ॥२९॥

अब त्रिपंथगा गंग गरबि तव सुता कहैहै ।
भागीरथी पुनीत नाम सौं जग जस छैहै ॥
त्रेता जुग मुनि बालमीकि द्वापर पारासर ।
कलि मैँ यह सुचि चरित चारु गैहै रतनाकर ॥३०॥

देव पितर सब भए तृप्त जग-जीवन भीन्यौ ।
जीव जंतु सु-अघाइ पाइ जल अति सुख लीन्यौ ॥
करि नहान जल-दान-क्रिया सब बेद-बखानी ।
अब तुमहूँ तौ पियौ पूत चिल्लू-भर पानी ॥३१॥

सकल-स्वर्ग-अपवर्ग-लाहु तुम तप-बल पायौ ।
अब दै कहा उमंगि करैँ हमहूँ मन-भायौ ॥
सिख आसिख यह देत तदपि हित-हेत सुहाई ।
सुख सौं भोगौ धर्म-सहित कल कर्म-कमाई ॥३२॥

तब हरि हित करि हेरि हुलसि हँसि अति मृदु-बानी ।
बोले बलित-बिनोद कृपा-रस सौं सरसानी ॥
दै सुर-सरित स्वयंभु संभु सिर लै जस लीन्यौ ।
इहिँ समाज हम लहत लाज कछु काज न कीन्यौ ॥३३॥

यातैँ यह बरदान मान-जुत दै सुख पावत ।
तव जस जग थिर थापि आपनी सकुच सरावत ॥
जब लौं सुरसरि-धार-हार बसुधा उर धारै ।
तब लौं तन तव सुजस-छीर-सर-चीर सँवारै ॥३४॥

गंग-अवतरन-चरित चारु जे सादर गावै[॥] ।
 पढ़ै[॥] गुनै[॥] मन लाइ सुनै[॥] कै सरुचि सुनावै[॥] ॥
 संपति संतति मान ज्ञान गुन ते बहु पावै[॥] ।
 बिलसि बिलास अनंत अंत सुर-लोक सिधावै[॥] ॥३५॥

औरहु जो बर चहु लहु सकुचहु जनि बोलौ ।
 दरि दुराव चढ़ि चाव भाव अंतर कौ खोलौ ॥
 हाँ हाँ सकुच बिहाइ कहौ इच्छा मनमानी ।
 भुज उठाइ इमि उठे बोलि संकर दिन-दानी ॥३६॥

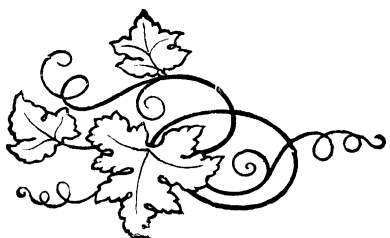
सबनि जोरि जुग हाथ कह्यौ नृप माथ नवाए ।
 है सनाथ हम नाथ सकल इच्छित फल पाए ॥
 तदपि यहै करि बिनय चहत अज्ञा-अनुगामी ।
 भारत पर निज कृपादृष्टि राखहु नित स्वामी ॥३७॥

सदा होइ यह धर्म-धान्य-धन-धीरज-धारी ।
 बिद्या-बुद्धि-बिवेक-बीरता को अधिकारी ॥
 याके पूत सपूत नित्य निज करतब साधै[॥] ।
 गंग गाय गोलोक-नाथ सादर आराधै[॥] ॥३८॥

करै[॥] प्रेम कौ नेम सकल मिलि छेम पसारै[॥] ।
 याकै[॥] हित हठि प्राण पानि-तल पर सब धारै[॥] ॥
 जब जब बिपति-समुद्र याहि बोरन कौं कोपै ।
 तब तब आप-प्रताप ताहि कुंभज है लोपै ॥३९॥

यह सुनि सकल सराहि नृपति निस्पृह कामनि कौं ।
 “एवमस्तु” कहि चले मुदित निज-निज धामनि कौं ॥
 नभ तैँ बरसे सुमन बजी आनंद-बधाई ।
 उमग्यौ मोद अनंत दिगंतनि जय-धुनि छाई ॥४०॥

पे भूप-सुकृत-राकेस-द्युति गंग सकल कलमस हरथौ ।
 १५-बानी-बिमल-बिलास बढि रतनाकर-उर संचरथौ ॥४१॥



त्रयोदश सर्ग

भूप भगोरथ तव अन्हाइ अदभुत सुख लीन्यौ ।
संभ्या-बंदन साधि देव-पितरनि जल दीन्यौ ॥
मन प्रमोद तन पुलक प्रेम-जल पलकनि छाए ।
गद्गद स्वर सौँ करी गंग-अस्तुति उमगाए ॥ १ ॥

जय तांडव-द्रव-भूत-ब्रह्म-मूरति अति पावनि ।
प्रबल-प्रभाव-अमोघ सकल-अघ-ओघ-नसावनि ॥
चतुरानन - हरि - ईस - परम-पद-बिसद-बितरनी ।
दस - पातक - असुरारि - रूप दस इक-अवतरनी ॥ २ ॥

जय विरंचि-कृत-बंक-अंक-निस्संक-पखारिनि ।
सुख-संपति-संताप-मान-बिस्तारिनि तारिनि ॥
जय हरि की स्रम-हरनि बाँटि तारन-कृति भारी ।
निज महिमा-बल-बिपुल बहुरि बहु रचि असुरारी ॥ ३ ॥

जय गिरीस - सुभ - सीस-सरस-सोभा-संचारिनि ।
हृत-त्रिलोक - त्रय-ताप-जनित-संताप - निवारिनि ॥
जय अमृतासन-बृंद-तोष-निज-बाढ़ - बढ़ावनि ।
स्वल्प - सुधा - कृत - देव-दनुज-दल-द्रोह-बहावनि ॥ ४ ॥

जय बिप्रनि हित परम ब्रह्म-विद्या की स्नेनी ।
 तोष मोष बिज्ञान मान इच्छित सब देनी ॥
 जय छत्रिय-कुल-दुरित-दलन-संगर की संगिनि ।
 चार-वर्ग-जय-हेत चमू चमकति चतुरंगिनि ॥ ५ ॥

जय बनिकनि के काज धनिक गाहक मति भोली ।
 खोट-पोट लै देति खरी मुक्तिनि की भोली ॥
 जय सूदनि हित अति उदार कोमल-चित स्वामिनि ।
 सेवत सद्यः देति सौख्य-संपति सुरधामिनि ॥ ६ ॥

जय जोगिनि की परम-तत्त्व सुख-निधि भोगिनि की ।
 सोगिनि की दुख-दरनि हरनि आरति रोगिनि की ॥
 जय जग-जननि अनंत छोह संतति पर छावनि ।
 मृतकहुँ लै निज गोद मोद सुख दै दुलरावनि ॥ ७ ॥

जय किल केहरि-माल कर्म-बन-गहन-सुचारिनि ।
 पातक-कुंजर-पुंज गंजि बर-मुक्ति-पसारिनि ॥
 दुख-दारिद्र-दुरभाग - दुरित गिरि-गुहा-बिदारिनि ।
 चिंता - भ्रम - उद्वेग - बेग-मृग-निखिल-निवारिनि ॥ ८ ॥

जय कलपद्रुम - कुसुम - मंजु - मकरंद - तरंगिनि ।
 सुर-नर-मुनि-मन-मधुप-पुंज-सरबस-सुख - संगिनि ॥
 जय बृंदारक-बृंद-बंध कल कामदुहा की ।
 धवल धार सुख-सार जीवनाधार धरा की ॥ ९ ॥

जय आनंद-तरंग गंग गिरि - नायक-नंदिनि ।
 जय जाह्नवी पुनीत ईति-भव-भीति - निकंदिनि ॥
 जय दिनेस-कुल-सुभ्र-सुजस-त्रिभुवन - संचारिनि ।
 भागीरथी कहाइ अमर-कल-कीरति-कारिनि ॥१०॥

जय सुचि-सुकृत-पयोधि-सुधा की धार सुधारी ।
 चारु - चार - फल - देन-पुन्य - तरु - सीँचनहारी ॥
 जाकैँ अर्घ अघात सुधा-भोगी बिबुधाकर ।
 जिहिँ नव-जीवन-पूरि भूरि उमगत रतनाकर ॥११॥

नृप-अस्तुति सुनि उठी गंग-उर कृपा-फुरहरी ।
 जल-तल पर लहरान लगीँ आनंद की लहरी ॥
 यह धुनि मंजुल मधुर धार-कलकल तैँ आई ।
 धन्य भगीरथ भूप धन्य तव पुन्य-कमाई ॥१२॥

यह तप-तेज प्रचंड सील की यह सियराई ।
 पावक पाला लसत सुमिल तुममैँ इकठाई ॥
 सब देवनि बर दिए दिव्य मन-मोद-मढ़ाए ।
 अब हमहूँ सौँ लहौ चहौ जो चाव-चढ़ाए ॥१३॥

यह सुनि नृप कर जोरि निवेदन सादर कीन्यौ ।
 सगर-कुमारनि तारि हमैँ सब कछु तुम दीन्यौ ॥
 दानी परम उदार पाइ पर वृषा न त्यागति ।
 यातैँ यह बरदान-लाहु-लालच जिय जागति ॥१४॥

पापी पतित स्वजाति-त्यक्त सौ-सौ पीढ़िनि के ।
धर्म-बिरोधी कर्म-भ्रष्ट च्युत स्तुति-सीढ़िनि के ॥
तब जल स्रद्धा-सहित न्हाइ हरि नाम उचारत ।
है सब तन-मन-सुद्ध होहिँ भारत के भारत ॥१५॥

यह सुनि पुनि धुनि भई धन्य तब नय-निपुनाई ।
देस-भक्ति भरपूर जाति-अनुरक्ति सुहाई ॥
सफल कामना होहिँ सकल तब सुचि-रुचि-वारी ।
भारत पर नित करै कृपा हरि आरति-हारी ॥१६॥

सुरसरि-आसिष पाइ निपट नरपति आनंदे ।
कपिलदेव अभिनंदि विविध पुनि सादर बंदे ॥
धन दिलीप कौ लाल धन्य यह जस सिख-दानी ।
साधि सकल निज कठिन काज पीयौ तब पानी ॥१७॥

करि प्रनाम तब पुलकि माँगि आयसु सुरधुनि सौँ ।
चढ़ि स्यंदन सानंद चले आसिष लहि मुनि सौँ ॥
लखत दुरंग तरंग गंग-गुन गुनत सुहाए ।
पूरित अमित उमंग अंग बेला पर आए ॥१८॥

तहँ देखे निज बाट लखत सुभ ठाठ जमाए ।
गंगागम सुधि पाइ धाइ उमगत चलि आए ॥
मंत्री सेनप सखा दास मुखिया हित-भीने ।
असन बसन सुख-साज-बाज नाना-बिधि लीने ॥१९॥

उतरि तुरत नरनाह तहाँ दीन्यौ सुभ दरसन ।
 धाइ-धाइ सुख पाइ लगे सब पायनि परसन ॥
 पुलकित-तन नर-नाह सबनि भुज भरि-भरि भेट्यौ ।
 पूछि-पूछि कुसलात तोषि दारुन दुख मेठ्यौ ॥२०॥

तब सब हठ करि उबटि भूप सादर अन्हवाए ।
 बसन बिभूषन बिबिध-भाँति हिय हुलसि धराए ॥
 रसना-रंजन बहु प्रकार व्यंजन सुचि परसे ।
 सबनि संग बैठाइ पाइ भूपति सुख-सरसे ॥२१॥

गिरिजा-नंदन बंदि चले चढ़ि-चढ़ि सब स्यंदन ।
 भरत भूरि आनंद करत नरवर-अभिनंदन ॥
 जहँ-तहँ उतरि भुआल गंग-कल-कीरति गावत ।
 मग के परम पुनीत धाम अभिराम लखावत ॥२२॥

इहिँ बिधि सुरसरि-तीर-तीर कासी लौं आए ।
 तहाँ पूजि पुनि माँगि बिदा लोचन जल छाए ॥
 बिस्वनाथ-पद बंदि बिबिध द्विज-गन सनमाने ।
 चले अवध-पुरि-ओर उमगि उर आनंद-साने ॥२३॥

नृप-आगम-सुभ-समाचार पुर-बासिनि पाए ।
 चौहट हाट बिराट बाट बहु ठाट सजाए ॥
 ध्वजा पताका प्रचुर चारु तोरन छबि-छाजी ।
 मंजुल मंगल-कलस रंभ-खंभनि की राजी ॥२४॥

पुरजन परिजन स्वजन चले उमगत अगवानी ।
 आगै~ किए बसिष्ठ आदि द्विज-गन बिज्ञानी ॥
 पुर बाहिर है लगे लखन लोचन ललकाए ।
 तब लौं दृग-पथ आइ भगीरथ-रथ नियराए ॥२५॥

लखि बसिष्ठ कुल-इष्ट भूप स्यंदन तजि धाए ।
 पुलकि ढारि दृग बारि सपदि पायनि लपटाए ॥
 कंपित कर बर पकरि माथ मुनि-नाथ उठायौ ।
 बरबस बिरति बिसारि प्रेम-कातर उर लायौ ॥२६॥

बार-बार कुसलात पूछि आनंद अवगाह्यौ ।
 कर्म-बीर-नर-नाह-साहसहिं हुलसि सराह्यौ ॥
 तब नर-बर सब अपर बिप्र-वृंदनि-पद बंदे ।
 पुर-बासिनि सनमानि मानि सुख सबनि अनंदे ॥२७॥

ग्राम-देवतनि पूजि दान बहु भाँतिनि कीन्यौ ।
 नाइ ईस कौं सीस पाय पुर-अंतर दीन्यौ ॥
 चले सकल मिलि कहत सुनत नृप-सुजस-कहानी ।
 पुर-बासिनि की भीर दरस-हित अति उमगानी ॥२८॥

धरे बसन बहु-भाँति पाँति दुहुँ ओर लगाए ।
 जय-जय-धुनि सब करत महा मन मोद मनाए ॥
 साजे नव-सत सुमुखि-वृंद छातनि छवि छावत ।
 गावत मंगल गीत सुमन सादर बरसावत ॥२९॥

बालक बलित-बिनोद फिरत देखत सो मेला ।
 कोउ कछु कौतुक लखत कोउ कहूँ करत भमेला ॥
 कोउ छेकत छैलात देखि कहूँ मंजु खिलौना ।
 कोउ ऐँठत इठलात मिठाइनि कं लहि दौना ॥३०॥

सिंह-पैरि पर भई भीर सोभित अति भारी ।
 हय गय स्यंदन सुभग सजे बहु बाँधि पँत्यारी ॥
 सेनप-स्र्नेनी लसति अस्त्र-सस्त्रनि सौँ साजी ।
 जहँ-तहँ राजति रुचिर राज-काजिनि की राजी ॥३१॥

लै लै कंचन-कलस कहूँ सुभ सुघर सुआसिनि ।
 साजे मंगल-थार थिरकि गवनति मृदु-हासिनि ॥
 बंदी मागध सूत सुजस गावत सुख-कारी ।
 भीर सँभारत लिए पुरट-लकुटी प्रतिहारी ॥३२॥

घंटा - संख - मृदंग - झाँझ - भेरी - धुनि छाई ।
 भूप-मंडली मंडि नगर तब लौँ तहँ आई ॥
 लही सबनि सुख-मोट चोट धौंसनि पर धमकी ।
 मनहु अवध पर घेरि घटा आनंद की घमकी ॥३३॥

बंदे विप्र-समाज राज-कुल-जन नृप भेँटे ।
 पूछि कुसल हँसि हेरि प्रजा-परिजन-दुख मेटे ॥
 पुलकि पूजि कुल-देव दान दै अवसर-वारे ।
 मुनि-नाथहिँ सिर नाइ पाय अंतःपुर धारे ॥३४॥

चहल-पहल तहँ मची मंजु महिलनि की भारी ।
बसन-बिभूषन-बलित ललित अवसर-अनुहारी ॥
कंचन-करवा वारि चलतिँ ढरकावन चेरी ।
राई लोन उतारि उमगि बलि जातिँ जठेरी ॥३५॥

बिप्र-बधू कुल-मान्य देतिँ आसिष सुख-सानी ।
परसतिँ पाय नवाइ सीस सरसत दृग रानी ॥
पुरट-पाट पट पारि पाँवड़े मृदुल मनोहर ।
सादर चलीँ लिवाइ ललकि गावति सुभ सोहर ॥३६॥

मनि-मंदिर बैठाइ पाय सानंद पखारे ।
सजि-सजि कंचन-थार आरते उमगि उतारे ॥
लगीँ निछावर होन सोन-मुक्ता-मनि-ढेरी ।
भरि-भरि कौँछनि चलीँ भाट-नट-नारि कमेरी ॥३७॥

इहिँ बिधि परमानंद होन नृप-मंदिर लागे ।
परिजन-प्रजा-समूह सकल सुख लहि अनुरागे ॥
घर-घर व्यापी भूप-सुकृत-सुभ-कथा सुहाई ।
कहत सुनत चहुँ कोद मोद-मढ़ि लोग लुगाई ॥३८॥

गुरु बसिष्ठ तब सोधि सुदिन दीन्यौ अनुसासन ।
सभा-भौन सजि बिसद बन्यौ दूजौ इंद्रासन ॥
द्विज-गन परम पुनीत प्रीति-जुत न्योति पठाए ।
सचिव सूर सामंत स्वजन परिजन जुरि आए ॥३९॥

सभाधिकारिनि सबनि जथोचित आसन दीने ।
 पुरबासिनि बर ब्यूह-बद्ध चहुँ दिसि थित कीने ॥
 बंदी मागध सूत बाँधि छेनी सजि सोहत ।
 नृप-आगम की बाट सबै प्रमुदित-चित जोहत ॥४०॥

इत नृप न्हाइ सिँचाइ मुनिनि अभिमंत्रित जल सौँ ।
 साजि अंग स-उमंग बिभूषन बसन बिमल सौँ ॥
 पंच देव कुल देव नवग्रह पूजि जथाबिधि ।
 गुरुदेवहिँ सिर नाइ चले उमड़्यौ आनंद-निधि ॥४१॥

सुभ सबच्छ गो लच्छ पौरि पर मोद मढ़ाए ।
 सोपस्कर करि दान सभा-मंदिर मैँ आए ॥
 तहँ बसिष्ठ पढ़ि बेद-मंत्र दीन्यौ अनुसासन ।
 करि प्रनाम तब कियौ भूप भूषित सिंहासन ॥४२॥

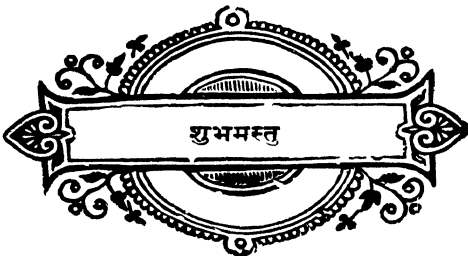
स्वस्ति-पाठ अरु जय-जय की धुनि-धूम सुहाई ।
 सभा-भौन तैँ उमड़ि घुमड़ि चारहुँ दिसि छाई ॥
 बहु प्रकार के दान मान महिदेवनि पाए ।
 जाचक भए अजाच प्रजा परिजन मुद छाए ॥४३॥

प्रीति नीति सौँ पागि प्रजा पालन नृप लागे ।
 सुख संपति भरि भूरि भाग बसुधा के जागे ॥
 बिरदावलिहिँ बढ़ाई लगे चारन उच्चारन ।
 स्वस्ति श्री तप-तरनि तरनि-तारनि-अवतारन ॥४४॥

लहि श्रीजगदंब-निदेस बर गंग-गिरा-गननाथ-बर ।
यह रतनाकर कीन्यौ अमर गंग-चरित सुभ सौख्यकर ॥४५॥

समाप्ति-संवत्

संवत् उनइस सै असी गुरु-पूनौ शृगु-बार ।
गंग-अवतरन काव्य यह पूरन भयौ उदार ॥





इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग की काव्य-विषयक पुस्तकें

रामचरितमानस

[टीकाकार—रायबहादुर श्यामसुन्दरदास, बी० ए०]

आज तक भारतवर्ष में रामायण के जितने संस्करण प्रकाशित हुए और आजकल छपकर बिक रहे हैं वे प्रायः नकली हैं; क्योंकि उनमें कितने ही दोहे चौपाइयाँ लोगों ने पीछे से लिख-लिखाकर मिला दी हैं। हमारे यहाँ की रामायण असली है; क्योंकि इस रामायण का पाठ गुसाईंजी के हाथ की लिखी पोथी से मिलाकर और काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा के पाँच सभासदों-द्वारा मिलकर शोध गया है। इसके सिवा और भी कितनी ही पुरानी हस्तलिखित प्रामाणिक पुस्तकों से पाठ मिला-मिलाकर इसमें गुसाईंजी की ही रचना रक्खी गई है, और छेपक आदि कूड़ा-करकट अलग कर दिया है। मूल चौपाइयों के अक्षर बड़े और सुस्पष्ट हैं। इसमें महाराज काशीनरेश की रामायण से सुन्दर-सुन्दर कई दर्जन चित्र बड़े परिश्रम से प्राप्त कर लगाये गये हैं। बड़ी साँची के ग्यारह सौ से अधिक पृष्ठों में ग्रन्थ समाप्त हुआ है। इसके सिवा

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

सत्तर पृष्ठों में भूमिका आदि है। मोटा चिकना कागज़, सुन्दर जिल्द, मूल्य केवल ८) आठ रुपये। यदि आप तुलसीदासजी की वास्तविक रामायण का रसास्वादन करना चाहते हैं तो इसे अवश्य खरीदिए।

संक्षिप्त रामचरितमानस (सचित्र)

गोस्वामी तुलसीदासकृत रामचरितमानस के संक्षिप्त संस्करण की ओर लोगों की रुचि विशेष रूप से देखकर यह पुस्तक तैयार कराई गई है। संचेप बड़ी चतुराई से किया गया है जिससे कथा-भाग टूटने नहीं पाया। मज़े में पढ़ते चले जाइए, कहीं सिलसिला न टूटेगा। इस संस्करण के पद-विन्यास आदि में कई विशेषताएँ कर दी गई हैं। इसके सिवा १२ चित्र भी लगा दिये गये हैं जिनमें एक रङ्गीन है। बाकी चित्र महाराज काशीनरेश की कृपा से, उनके यहाँ की अमूल्य प्रति से, लिये गये हैं। मँभोले आकार के ३०० पृष्ठ की सजिल्द पुस्तक का मूल्य १) एक रुपया।

मानससूक्तावली

[संग्रहकर्ता—रायबहादुर श्यामसुन्दरदास, बी० ए०]

इसमें गोस्वामी तुलसीदासजी के रामचरितमानस के शुद्ध पाठ से छाँटकर उन अनूठी चौपाइयों और दोहों का संग्रह किया गया है जिनका उपयोग लोग बातचीत करते समय या लेख आदि लिखने में किया करते हैं। सर्वसाधारण को

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

गोस्वामीजी की उक्तियाँ एक प्रकार से धर्मशास्त्र का काम देती हैं। संसार के पारस्परिक व्यवहार में गोस्वामीजी की उक्तियों का उपयोग प्रचुरता से किया जाता है। मौके से इन उक्तियों का प्रयोग कर देने से भाषण या लेख सुन्दर और सरस हो जाता है। इस संग्रह में अभीष्ट उक्तियाँ सहज ही मिल जायँगी। इसमें ७५० पद्यों अथवा पद्यखण्डों का संग्रह है। अन्त में अनुक्रमणिका भी दे दी गई है जिससे अभीष्ट विषय के पद्य सरलता से मिल सकें। आकार छोटा, पृष्ठ-संख्या ३०० के लगभग। सजिल्द प्रति का मूल्य १) एक रुपया।

विनयपत्रिका

[आगरा-निवासी स्व० पं० रामेश्वर भट्ट-कृत सरला टीका सहित]

प्रेम और भक्ति के वर्णन की दृष्टि से विनयपत्रिका का नम्बर रामायण से पहले गिना जाता है। इसका प्रत्येक पद भक्ति और प्रेम-रस में सराबोर है। अर्थ ऐसी सीधी-सादी भाषा में स्पष्ट कर दिया गया है कि कम पढ़े-लिखे लोग भी आसानी से समझ सकते हैं। पृष्ठ-संख्या ४०० के लगभग, सुन्दर जिल्द। मूल्य ३) तीन रुपये।

संक्षिप्त सूरसागर

[संपादक—प्रोफ़ेसर बेणीप्रसाद, एम० ए०]

भक्त-प्रवर सूरदास का बनाया हुआ सूरसागर बहुत प्रसिद्ध ग्रन्थ है। हिन्दुओं को नये सिरे से उसका परिचय

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

देने की ज़रूरत नहीं। इसमें सूरदासजी ने श्रीमद्भागवत के कथाभाग का वर्णन अनेक राग-रागिनियों में किया है। मूल ग्रंथ बहुत बड़ा है। उसका मूल्य भी कम नहीं। इसलिए उसको सब लोग ले भी नहीं सकते। इसी कारण प्रयाग विश्व-विद्यालय के इतिहासाचार्य डाक्टर वेणीप्रसादजी ने बड़े परिश्रम से 'सागर' की छानबीन करके इस ग्रन्थ का सम्पादन किया है। सभी लीलाओं से सम्बन्ध रखनेवाले मुख्य-मुख्य पदों का संग्रह किया गया है। इन पदों के समानार्थक तुलसी, कबीर, दादू, हरिश्चन्द्र और रसखान प्रभृति अन्य प्रसिद्ध हिन्दी-कवियों के पद्य भी, सूरदास की कृति से तुलना करने के लिए, यत्र-तत्र उद्धृत किये गये हैं। पाठ शुद्ध है, फिर एक और यह सुभीता है कि कथा का सिलसिला टूटने नहीं पाया है।

आरम्भ में सूरदास का संक्षिप्त परिचय भी दे दिया गया है। सूरदासजी के पदों का माधुर्य वही जानता है जिसने उनके पदों को पढ़ा, सुना अथवा गाया है। ऐसी अच्छी पुस्तक सभी को लेनी चाहिए। पृष्ठ-संख्या ३२ + ५२२। सजिल्द पुस्तक का मूल्य सिर्फ २॥॥ दो रुपये आठ आने।

विद्यापति ठकुर की पद्यावली

पन्द्रहवीं शताब्दी में विद्यापति ठाकुर हिन्दी के महाकवि हो गये हैं। आपकी कविता बड़ी मधुर और हृदयग्राहिणी

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

है। वह मैथिली हिन्दी में है। बँगला-साहित्य में भी आपकी रचना उच्च कोटि की समझी जाती और आदर की दृष्टि से देखी जाती है। मिथिला में तो उनकी कविता का अत्यधिक मान है। हिन्दी-संसार में अभी उनकी विशेष रूप से चर्चा नहीं हुई। अतएव हिन्दी-संसार का उसके एक छिपे हुए रत्न से परिचय कराने के लिए ही उनकी यह पद्यावली प्रकाशित की गई है। सरस्वती के आकार के ४७५ सफ़्फ़ों की पुस्तक का मूल्य केवल २) दो रुपये।

कविता-कलाप

[सम्पादक—पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी]

यह हिन्दी के प्रसिद्ध कवि स्वर्गीय राय साहब देवीप्रसाद (पूर्ण) बी० ए०, बी० एल०, पण्डित नाथूराम 'शङ्कर' शर्मा, पण्डित कामताप्रसाद गुरु, बाबू मैथिलीशरण गुप्त और पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी की ओजस्विनी लेखनी से लिखी गई ४६ सचित्र कविताओं का अपूर्व संग्रह है। प्रत्येक हिन्दी-भाषा-भाषी को मँगाकर इसे पढ़ना चाहिए। अधिकांश कविताएँ बोल-चाल की भाषा में हैं। हिन्दी-भाषा में खड़ी बोली की कविता का ऐसा अनूठा संग्रह आज तक नहीं छपा। इसमें अधिकांश चित्र प्रसिद्ध चित्रकार राजा रवि-वर्मा के बनाये हुए हैं और कई चित्र रङ्गीन हैं। जिस प्रकार इस शोभाधाम ग्रन्थ के चित्र अति ललाम और नयनाभिराम

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

हैं उसी प्रकार सकी रसीली कविताएँ भी बड़ी ही मनो-भिराम हैं। ऐसी उत्तम सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल ३) तीन रुपये।

कुमारसम्भवसार

[लेखक—पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी]

कवि-कुल-गुरु कालिदास के “कुमारसम्भव” काव्य का यह मनोहर सार है। प्रत्येक हिन्दी-कविता-प्रेमी का द्विवेदीजी की यह मनोहारिणी कविता अवश्य पढ़नी चाहिए। कविता सरस और प्रभावशालिनी है। मूल्य केवल ॥ आने।

हिन्दी-मेघदूत

[अनुवादक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

कवि-कुल-कुमुद-कलाधर कालिदास-कृत मेघदूत का समवृत्त और समश्लोकी (खड़ी बोली में) हिन्दी-अनुवाद मूल श्लोक-सहित।

हिन्दी-साहित्य में यह ग्रन्थ अपने ढङ्ग का अकेला है। कविता-प्रेमियों, विशेष करके खड़ी बोली की हिन्दी-कविता के रसिकों, को यह मेघदूत अवश्य देखना चाहिए। बड़ी मनो-हारिणी कविता है। पुस्तक में अनुवादक का एक हाफ़टोन तथा विरही यत्न और विरहिणी यत्न-पत्नी के दो सुन्दर रङ्गीन चित्र भी यथास्थान दिये गये हैं। मूल्य नाम-मात्र के लिए ॥ आठ आने।

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

मेघदूत

[सम्पादक—रायबहादुर श्यामसुन्दरदास, बी० ए०]

स्वर्गीय राजा लक्ष्मणसिंह-कृत मेघदूत का यह अनुवाद बहुत अच्छा माना जाता है। इसमें संस्कृत मूल, पद्य-बद्ध सरस सरल अनुवाद और साथ ही गद्यानुवाद भी है। दो रङ्गीन चित्र हैं। छपाई सफ़ाई उत्तम। मूल्य ॥=॥ दस आने

चारण

['श्रीवर' लिखित पद्यात्मक कहानी]

हिन्दी-साहित्य में यह पुस्तक बिलकुल नई है। इसका ढङ्ग नया है; कथा बड़ी रोचक और सरल है। प्राकृतिक दृश्यों का मनोरञ्जक वर्णन, प्राचीन राजपूत-गौरव का निदर्शन तथा चारण की आत्म-कथा पढ़ते ही बनती है। इसमें हिन्दुओं के पूर्वजों की, अतीत काल की, वीरता का वर्णन है। मूल्य ॥ चार आने।

मौलाना हाली और उनका काव्य

[लेखक—पं० ज्वालादत्त शर्मा]

शम्स-उल्-उल्मा मौलाना अलताफ़ुद्दौलत हाली उर्दू के मशहूर कवि हो गये हैं। आप महाकवि ग़ालिब के शिष्य थे। उच्च कोटि की कविता करते थे। उर्दू के साहित्य में इनकी खासी धाक थी। प्रस्तुत पुस्तक में कवि हाली का जीवनचरित है और उनकी कविता के नमूने अनेक ग्रन्थ

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

से एकत्र किये गये हैं। पद्यों का अर्थ सरल हिन्दी में दे दिया गया है। अन्त में कठिन शब्दों का छोटा सा कोष भी है। पृष्ठ-संख्या पौने दो सौ से ऊपर। सजिल्द पुस्तक का मूल्य १) एक रुपया।

महाकवि अकबर

[लेखक—बाबू रघुराजकिशोर 'वतन', बी० ए०]

प्रयाग-निवासी खान बहादुर सैयद अकबरहुसेन “अकबर” का स्वर्गवास हुए थोड़ा ही समय हुआ है। ये उर्दू-संसार के बहुत बड़े कवि थे। आपने समय के अनुसार कविता में एक प्रकार का नया जीवन डाल दिया था। इस ग्रन्थ के पहले भाग में जीवनचरित और काव्य की आलोचना की गई है; दूसरे, तीसरे और चौथे भाग में उनकी चुनी हुई गज़लें, सामाजिक और सामयिक पद तथा विविध विषयों से सम्बन्ध रखनेवाली कविताएँ दी गई हैं। प्रत्येक पद की टिप्पणियों में सामयिक और अन्य विषयों पर अकबर का मत प्रकट किया गया है। यथास्थान कहीं-कहीं अन्य कवियों के भी पद उद्धृत किये गये हैं। पुस्तक के अन्तिम भाग में कठिन शब्दों का अर्थ भी दिया गया है। कागज़ बहुत बढ़िया लगाया गया है तथा कवि का चित्र भी दे दिया गया है। पृष्ठ-संख्या १४० के लगभग। मूल्य केवल १) एक रुपया।

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

